ग्रामीण विकास को समर्पित

कुरुक्षेत्र

50 अंक : 11 सितम्बर 2004 मूल्य : सात रुपये

भारत में प्राथमिक शिक्षा

नवीन शिक्षा नीति

उच्च शिक्षा पर व्यय

भूमंडलीकरण के दौर में शिक्षा पर प्रभाव

भारत में महिला साक्षरता

जनजातीय क्षेत्रों में बालिका शिक्षा

महिलाओं का ताजमहल

निरक्षर कैदियों को साक्षर बनाने का सफल प्रयास

पौष्टिक आहारः स्वास्थ्य का मूल आधार

सर्वशिक्षा अभियान

राष्ट्रपति द्वारा शिक्षा को आकर्षक बनाने के लिए तीन स्तरीय रणनीति का सुझाव

राष्ट्रपति डा. एपीजे अब्दुल कलाम ने शिक्षा के मिशन के लिए सकल घरेलू उत्पाद के 2 से 3 प्रतिशत अतिरिक्त धन जुटाने का आह्वान किया है। उन्होंने कहा कि केवल सरकारी धन से ही इस चुनौती का सामना नहीं किया जा सकता। स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर राष्ट्र को संबोधित करते हुए राष्ट्रपति ने संपूर्ण निगमित क्षेत्र से अपील की कि वे कुछ उद्योगपतियों द्वारा रखे गए उदाहरण का अनुकरण करें, जिन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर प्रभाव छोड़ने के लिए शिक्षा पर ध्यान केंद्रित किया है। उन्होंने शिक्षा को अधिक आकर्षक और रोजगार की संभावनाओं वाली बनाने के लिए एक तीन स्तरीय नीति का सुझाव दिया।

शिक्षा का मिशन

किसी भी राष्ट्र के विकास और समृद्धि के लिए सबसे जरूरी तत्व शिक्षा है। भारत 2020 तक एक विकसित राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में है। परंतु अभी हमारे देश में ऐसे 30 करोड़ 50 लाख लोग हैं जिन्हें साक्षर बनाने की जरूरत है और ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्हें उभरते हुए आधुनिक भारत और विश्व के अनुकूल रोजगार योग्य कौशल प्राप्त करना है। इसके अलावा हमें समाज के कमजोर वर्गों के उन बच्चों के बारे में सोचना चाहिए जो अल्प पोषित हैं, और उनमें से कुछ प्रतिशत ही 8 वर्ष तक की अपनी शिक्षा पूरी कर पाते हैं जबकि अब शिक्षा प्रत्येक भारतीय बच्चे का मौलिक अधिकार है। क्या हम चाहेंगे कि ये लाखों बच्चे जीवन भर गरीबी में जीते रहें। जरूरत इस बात की है कि अभिभावकों को अपने बच्चों को नजदीकी स्कूल में ले जाकर दाखिला करवाना चाहिए और प्रसन्नता और इस विश्वास के साथ वापस घर लौटना चाहिए कि उनका बच्चा उस स्कूल में अच्छी और नैतिक मूल्यों से शिक्षा प्राप्त करेगा। मानसिक और शारीरिक रूप से अक्षम बच्चों की ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। इन गंभीर मुद्दों के महत्व को देखते हुए और अपनी पुरानी मानसिकता को समाप्त करने के लिए, सभ्यता के अस्तित्व और विकास हेतु एक प्रभावी और स्वनिर्मित शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है। इसलिए मैं शिक्षा से संबंधित मुद्दों पर विस्तार से चर्चा करना और क्रियान्वयन के लिए कुछ समाधान बताना चाहता हूं।

शैक्षिक संसाधनों तक असमान पहुंच

मैं आपको अपनी एक प्रमुख चिंता के बारे में बताता हूं। अनेक कारणों से शैक्षिक संसाधनों तक असमान पहुंच, अभी तक बनी हुई है। उदाहरण के लिए मैंने गांवों में तीन प्रकार के परिवार देखे हैं। पहले, वे भाग्यशाली परिवार, जो किसी भी कीमत पर परिवार के बच्चों को शिक्षित करने और अपनी आर्थिक संपन्नता के कारण सभी स्तरों पर उनका मार्गदर्शन करने का महत्व जानते हैं। फिर वे परिवार हैं, जो शिक्षा का महत्व तो जानते हैं, पर वे न तो अपने बच्चों के लिए अवसर और न ही उन्हें साकार करने की प्रक्रिया और तरीकों के बारे में जानते हैं। तीसरे प्रकार के परिवार वे हैं जो आर्थिक रूप से कमजोर हैं और जो शिक्षा के महत्व को नहीं जानते हैं और पीढ़ियों से उनके बच्चे उपेक्षा और गरीबी में जीते आ रहे हैं।

यह आवश्यक है कि हम समाज के सभी वर्गों विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों और शहर में रहने वाले गरीबों को शिक्षा के प्रति जागरूक बनाएं। हमें इस महत्वपूर्ण सामाजिक उद्देश्य के लिए प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना चाहिए। गैर सरकारी संगठनों, अन्य सामाजिक और लोक उपकारी संस्थाओं और मीडिया के लिए इस क्षेत्र में जागरूकता पैदा करना संभव है। अल्पसुविधा प्राप्त लोगों को शिक्षा उपलब्ध करवाने के लिए हमें आवश्यक संसाधनों को गतिशील बनाना चाहिए। आइए आगे इस पर विस्तार से चर्चा करें।

शिक्षा मिशन के लिए संसाधन जुटाना

पिछले 50 वर्षों से, प्रत्येक सरकार सर्वव्यापी शिक्षा का राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त करने के प्रति कटिबद्ध रही है और शिक्षा के लिए लगातार बजटीय आबंटन में वृद्धि की गई है। जबकि हमारी 35 प्रतिशत प्रौढ़ जनसंख्या को अभी शिक्षित किया जाना है। हमारे सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत पर सीधा असर होता है। यदि हमें शत प्रतिशत साक्षरता प्राप्त करनी है तो शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 6 से 7 प्रतिशत व्यय जरूर करना होगा। 2 से 3 प्रतिशत तक की वृद्धि को कुछ वर्षों तक बनाए रखना होगा। इसके बाद शिक्षा पर कम सकल घरेलू उत्पाद आबंटन भी भविष्य में साक्षरता का ऊंचा स्तर कायम रखने के लिए पर्याप्त होगा।

यह स्पष्ट है कि केंद्र और राज्य सरकारें शिक्षा मिशन के लिए सकल घरेलू उत्पाद का अतिरिक्त 2 या 3 प्रतिशत सार्वजनिक व्यय जुटाने की चुनौती पूरी न कर पाएंगी। इसलिए, हमें इस महत्वपूर्ण मिशन के लिए अतिरिक्त संसाधन पैदा करने होंगे। केंद्र में या राज्यों में शिक्षा पर होने वाला खर्च अब केवल संबंधित मानव संसाधन विकास मंत्रालयों या विभागों द्वारा उपलब्ध नहीं करवाया जा सकता। वास्तव में, सरकार के प्रत्येक विभाग को मानव संसाधन विकास संगठन के साझीदार के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए और संपूर्ण राष्ट्र को उत्तम शिक्षा प्रदान करने के मिशन को क्रियान्वित करने के लिए बजट और बुनियादी ढांचों से जुड़े संसाधनों में योगदान देना चाहिए। मैं समस्त कार्पोरेट क्षेत्र से अपील करता हूं कि सरकारी संसाधनों को बढ़ाने के लिए, वे शिक्षा के महत्व पर जोर देने वाले कुछ कार्पोरेट प्रमुखों द्वारा स्थापित उदाहरण का अनुकरण करें, जिन्होंने राष्ट्र के लाभ के लिए शिक्षा पर ज्यादा ध्यान दिया है। शिक्षा के समग्र राष्ट्रीय मिशन के अंतर्गत कार्पोरेट क्षेत्र द्वारा देश के विभिन्न क्षेत्रों को गोद लिया जा सकता है। इस प्रणाली से व्यक्ति को कुछ नया करने और देने की स्वतंत्रता दी जा सकती है।

शिक्षा का मानकीकरण

शिक्षण की गुणवत्ता और मानक में भिन्नता के कारण पसंदीदा स्कूल की अवधारणा प्रबल हो रही है। स्कूलों में शिक्षण की गुणवत्ता बढ़ाने की जरूरत है। इसके अलावा ग्रामीण क्षेत्रों में नियमित शिक्षा के लिए स्कूल में प्रवेश के समय से ही बच्चों को प्रतिस्पर्द्धी बनाया जाना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे स्कूल चलाने में गैर सरकारी संगठन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। संपन्न अभिभावक यदि सक्षम हों तो प्रारंभिक स्कूलों में शिक्षा दिलवाने के लिए कुछ ग्रामीण बच्चों को गोद ले सकते हैं।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 50 ● अंक : 11

भाद्रपद–आश्विन 1926

सितंबर 2004

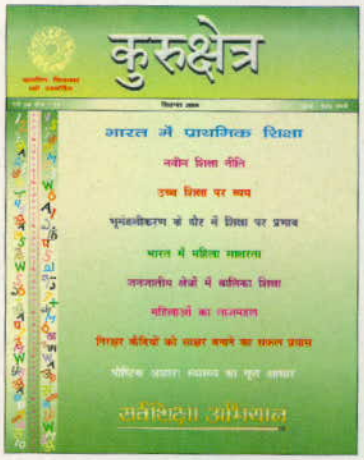

संपादक
स्नेह राय

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार

संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23015014,
फैक्स : 011–23015014
तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@pub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी.एन. गांधी
व्यापार व्यवस्थापक
दूरभाष : 24367260, 2436509, 24365610

सज्जा
अजय भंडारी

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 700 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

लेख		
● भारत में प्राथमिक शिक्षा	संगीता सारस्वत	6
● सर्वशिक्षा अभियान	प्रकाश नारायण नाटाणी	9
● नवीन शिक्षा नीति और प्राथमिक शिक्षा	अभिनय कुमार शर्मा	13
● भारत में उच्च शिक्षा पर व्यय : एक दृष्टि	डा. विजय सिंह राघव	15
● भूमंडलीकरण के दौर में शिक्षा पर प्रभाव	नरेन्द्र सिंह, सीमा देवी	21
● भारत में महिला साक्षरता की स्थिति	डा. मुकेश कुमार शर्मा	24
● उत्तरांचल में महिला साक्षरता	प्रो. रामानंद गैरोला	27
● साक्षरता और छत्तीसगढ़	डा. कृष्ण कुमार शर्मा	31
● राजस्थान में साक्षरता	डा. श्याम मनोहर व्यास	33
● जनजातीय क्षेत्रों में बालिका – शिक्षा	रमेश नैयर	34
रोजगार		
● कुटीर तथा घरेलू ग्रामोद्योग	गिरीश चंद्र पांडे	36
सफलता की कहानी		
● महिलाओं का ताजमहल	–	38
● निरक्षर कैदियों को साक्षर बनाने का सफल प्रयास	घनश्याम वर्मा	39
हमारी संस्कृति		
● हमारी संस्कृति की हिस्सा थीं पगड़ियां	रवि भारती	40
● लोक कहावतें और भारतीय ग्राम्य संस्कृति	इंदल सिंह भदौरिया	41
पौष्टिक आहार सप्ताह पर विशेष		
● पौष्टिक आहार : स्वास्थ्य का मूल आधार	डा. नीना कनौजिया	43
स्वास्थ्य–चर्चा		
● आयोडीन की कमी : कारण, लक्षण और नियंत्रण	जिल्ले रहमान	47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में ए.के. दुग्गल, सहायक विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत–सम्मत

एक अनुपम मॉडल की आवश्यकता

मैं *कुरुक्षेत्र* का नियमित पाठक हूं; पर इस पत्रिका की उपयोगिता एवं महत्व को देखते हुए मुझसे नहीं रहा गया और बस पत्र लिख डाला। यह पत्रिका इतनी महत्वपूर्ण है कि इसे पाने के लिए काफी मशक्कत करनी पड़ती है। यह शहरी क्षेत्र के सीमित व्यक्तियों तक ही सिमट कर रह जाती है। अतः आपसे मेरा निजी आग्रह है कि अधिकाधिक संख्या में अभिकर्ताओं की नियुक्ति की जाए ताकि यह श्रेष्ठ पत्रिका सुदूर ग्रामीण भाई–बहनों तक सुगमतापूर्वक पहुंच सके। इसके लिए वर्ष में एक बार सर्वे करने की भी आवश्यकता है।

जुलाई 2004 का अंक पढ़ने को मिला। अंक अच्छा लगा, किंतु राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम का ग्रामीण विकास का 'पूरा मॉडल' काफी अच्छा लगा। ग्रामीण विकास को समर्पित यह पत्रिका शिक्षकों के लिए तो ज्ञान–गंगा व प्रशिक्षक तुल्य है। पूरा मॉडल तथा अन्य लेखों का व्याख्यान के.के.एम. कालेज, जमुई (बिहार) के स्नातक कक्षा के छात्रों को सुनाया तो लड़के काफी प्रभावित और लाभान्वित होते दिखे। डा. कलाम साहेब ने 21वीं शताब्दी के परिवर्तन काल में भारत के ऐतिहासिक और आर्थिक पहलुओं को भली–भांति और बारीकी से समझा और उनका विश्लेषण किया तथा सचेष्ट अध्ययन करने का जो सामयिक प्रयास किया है, बहुत ही सराहनीय व मान्य है। इस मॉडल में ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुख–सुविधाएं एवं विकास की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ती है। जो अन्य मॉडलों में दुर्लभ है।

यदि ग्रामीण विकास का 'पूरा' मॉडल भारत जैसे अल्पविकसित देशों में लागू तथा महाविद्यालय –वि.वि. के पाठ्यक्रमों में शामिल कर दिया जाए तो फिर 2020 तक भारत को विकसित राष्ट्र बनाने का सपना साकार होने में देर नहीं लगेगी। आधुनिक विस्तारवादी युग में इस मॉडल की सख्त आवश्यकता है। यह मॉडल (पूरा) सर्वाधिक क्रांतिकारी मॉडलों की अपेक्षा एक अनुपम मॉडल है कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

गौरी शंकर पासवान
व्याख्याता, अर्थशास्त्र, के.के.एम. कॉलेज,
जमुई (बिहार)

मित्र ही नहीं गुरु भी

मैं बहुत हर्ष के साथ यह संदेश भेज रहा हूं कि यह पत्रिका मेरे जीवन का एक अभिन्न मित्र ही नहीं बल्कि एक साक्षात गुरु है। मेरा लक्ष्य एक सफल सामाजिक सेवक बनना है। इस क्षेत्र में यह पत्रिका मेरे लिए एक कारगर पथ–प्रदर्शक सी दिख रही है। *कुरुक्षेत्र* का जुलाई अंक पढ़ा। इस अंक में श्याम सुंदर सिंह चौहान और साधना सिंह का लेख "ग्रामीण विकास' पूरा मॉडल मुझे काफी अच्छा लगा। इसमें ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी सुख–सुविधा मुहैया कराने की सरकार की योजनाओं की काफी अच्छी जानकारी मिली। इस अंक में सफलता की कहानी "एक गांव की कायापलट" भी पढ़ी। मैं आशा करता हूं कि मुझे भी नहीं बल्कि *कुरुक्षेत्र* पढ़ने वाले सभी दोस्तों को यह कहानी प्रेरणा देगी।

नागेंद्र कुमार
काकी रोड, जहानाबाद (बिहार)

बौद्धिक संपदा अधिकार पर महत्वपूर्ण सामग्री

कुरुक्षेत्र जुलाई–04 का अंक पढ़कर काफी अच्छा लगा। ग्राम–विकास का पूरा 'माडल' नामक लेख में राष्ट्रपति ने भौतिक, आर्थिक, ज्ञान तथा इलेक्ट्रानिक संपर्क के माध्यम से गांवों का कायाकल्प करने वाला संकल्प व्यक्त किया है। वास्तव में मॉडल अपने तरह का अद्वितीय मॉडल है; तथा गांवों का चरम विकास करने में सक्षम भी हैं परंतु इसके लिए जरूरी है दृढ़ इच्छाशक्ति एवं सार्थक प्रयास। भारत जैसे देश में 21वीं सदी में भी भ्रष्टाचार एवं प्रशासनिक दुर्बलताएं इतनी प्रबल हैं कि पूरा–अधूरा या अच्छे से अच्छे माडल की कमर तोड़ देने में सक्षम हैं। अगर कहें कि 'भारत गांवों में बसता है इसका विकास होना चाहिए' तो वहीं यह भी कहना पड़ेगा कि भ्रष्टाचार सत्ता में बसता है इसका नाश होना चाहिए। भ्रष्टाचार के विनाश के बिना भारत का विकास संभव नहीं है।

टी.सी. जेम्स का लेख ग्रामीण विकास और बौद्धिक संपदा अधिकार पर महत्वपूर्ण जानकारी प्रस्तुत करता है। इमिटेशन तथा टिक्करिंग से बचने के लिए ग्रामीण उत्पादकों का हित आई.पी.आर. में निहित है। परंतु बहुत से उत्पादकों एवं हस्तशिल्पियों को इस तरह के पेटेंट आदि की जानकारी नहीं है, इससे उन्हें अवगत कराना चाहिए।

'संचार प्रौद्योगिकी गांवों की ओर' के लेख हेतु जगनारायणजी हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं परंतु संचार प्रौद्योगिकी से जनित होने वाली समस्याओं जैसे ई–जंक और ई–वेस्ट पर ध्यान देना चाहिए। पॉलीथीन से जन्य समस्याओं की तरफ उमेशजी ने ध्यान आकर्षित कराया है। यह युग प्लास्टिक युग बन चुका है। हमारा जीवन आज प्लास्टिक के बिना अधूरा प्रतीत हो रहा है तो कल यह भी संभव है कि प्लास्टिक के ही कारण जीवन ही दूभर हो जाए। इससे अधिक से अधिक बचने का प्रयास करना चाहिए तथा अब बायो–प्लास्टिक के उत्पादन एवं उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

अन्य लेख भी ज्ञानवर्द्धक एवं महत्वपूर्ण लगे। इसके लिए हार्दिक साधुवाद।

सत्येंद्र पूजन प्रताप त्रिपाठी
तेलियर गंज, इलाहाबाद (उ.प्र.)

ग्रामीण जनता के लिए अवतार

मैं *कुरुक्षेत्र* पत्रिका का नियमित पाठक हूं मैं इस पत्रिका का लगभग दो सालों से अध्ययन कर रहा हूं। इस पत्रिका के माध्यम से मुझे ढेर सारी जानकारियां मिली हैं। मैं

इस पत्रिका के हर अंक का बेसब्री से इंतजार करता हूं। वास्तव में यह पत्रिका ग्रामीण जनता के लिए अवतार सिद्ध हो रही है। मैंने जुलाई, 2004 का अंक पढ़ा। जिसमें डा. उमेश चंद्र अग्रवाल का आलेख 'पॉलीथीन प्रदूषण स्वास्थ्य के लिए खतरा' एवं कुमार मंयक का आलेख 'बढ़िया गुड़ उत्पादन से हो सकती है अच्छी आमदनी' पढ़कर काफी जानकारी मिली। आपसे अनुरोध है कि ग्रामीण परिवेश में रह रहे गरीब, निर्धन छात्रों को सरकार द्वारा दी जाने वाली छात्रवृत्ति के बारे में इस पत्रिका के माध्यम से जानकारी देने की कृपा करें।

प्रवीण कुमार पाठक
करपी, अरवल (बिहार)

गांव की गंगा

'जुलाई' अंक पढ़ा। 'संपादकीय' बेजोड़ रहा। गांव के विकास के विषय में इतनी अच्छी और स्तरीय सामग्री, इतने सस्ते मूल्य पर हमें कहीं अन्यत्र नहीं मिल सकती। इसलिए यदि *कुरुक्षेत्र* को 'गांव की गंगा' कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। भारत गांवों का देश है और जब तक गांव विकसित व सर्वसुविधा संपन्न नहीं होंगे तब तक इस आर्यावर्त के विकसित देश बनने का सपना साकार नहीं हो सकता। इस दिशा में भारत सरकार का 'ग्रामीण विकास मंत्रालय' अच्छी एवं सार्थक पहल कर रहा हैं जिसमें गांव के सोए हुए लोगों में जागृत्ति की भावना आने लगी है। आज गांवों में भी विकास रूपी गंगा प्रवाहित होने लगी है। इस अंक में आपने 'राजस्थान में धार्मिक पर्यटन के विकास की संभावनाएं' शीर्षक लेख देकर पत्रिका में चार चांद लगा दिए हैं।

दिलीप कुमार जायसवाल
चिरैयाकोट, मऊ (उ.प्र.)

जल–ज्योति

कुरुक्षेत्र जून 2004 अंक पढ़ा। 'जल ही जीवन है' के कथन से संदर्भित इस अंक में जिस प्रकार ज्योति प्रदान की गई है, वास्तव में यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण और हम जिज्ञासुओं की तृष्णा–तृप्ति हेतु प्रशंसनीय प्रयास है। सर्वथा की भांति यह अंक भी हमारे व्यावहारिक जीवन को यथार्थ का वास्तविक धरातल प्रदान करने के स्व–प्रयत्न में सफल रहा। हमारे देश में जल का वर्तमान परिदृश्य वास्तव में चिंतनीय स्वरूप धारण करता जा रहा है उसे देखते हुए सचमुच एक कठिन व दुश्वार जीवन की ओर हम सब अग्रसर हैं। शहर से गांव तक और मैदान से पहाड़ तक जल का जलता स्रोत जीवन की ज्योति को बुझाने में लगा है। जीवन की ज्योति में जल से ही प्रकाश प्राप्त होता है। सभी गांवों में बिजली नहीं दे पाईं हमारी 57 वर्षों की सरकारें कम से कम शुद्ध जल जो बचा है उसे तो छोड़ दें या फिर कुछ सकारात्मक प्रयास करें।

राकेश कुमार दुबे
एम.ए., दिल्ली विश्वविद्यालय

स्वरोजगार के लिए

हमारे देश में बेरोजगारी कभी न हल होने वाली एक राष्ट्रीय समस्या है। सरकारी घोषणा पत्रों में युवाओं को रोजगार देने के वायदे किए जाते हैं पर रोजगार देना तो दूर रोजगार के अवसर भी समाप्त किए जा रहे हैं। संसाधनों और नीतियों के दोषपूर्ण दोहन से रोजगार की समुचित व्यवस्था नहीं की जाती है। लाखों बेरोजगारों को अब यह समझना होगा कि सरकार द्वारा दी जाने वाली ऋण सुविधा का लाभ लेकर स्वरोजगार को चुनना होगा। बेरोजगार चाहें तो खुद रोजगार पैदा कर सकते हैं।

सर्वप्रथम बेरोजगार युवा यह मान लें कि रोजगार पाने के लिए उसे अपने पैतृक रोजगार को ही प्राथमिकता देनी होगी और उसे नई तकनीक एवं आधुनिक तौर से प्रारंभ करना होगा जैसे, कृषक, बढ़ई, नाई, मिस्त्री, मैकेनिक, व्यवसाई, मोची, पशु पालन, कुम्हार आदि वर्ग के रोजगार ही आप का सर्वश्रेष्ठ साधन बन सकते हैं, यह काम शुरू करने का सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि इस काम को शुरू करने के लिए प्रशिक्षण या किसी प्रकार की योग्यता नहीं चाहिए चूंकि पैतृक धंधा ही सर्वगुणसंपन्न माना जाता है पर यह काम प्रारंभ करने में पढ़े–लिखे युवाओं को शर्म या झिझक महसूस होती है। शर्म महसूस करने वाले युवाओं को सरकार के भरोसे रहने से अच्छा है अपने साधनों का दोहन करें। शासन द्वारा ऐच्छिक व्यक्ति को विभिन्न योजनाओं के द्वारा ऋण की सुविधा दी जाती है जिसका लाभ बेरोजगारों को लेना चाहिए। अगर बेरोजगार युवक–युवती अपना पैतृक रोजगार न अपना कर अन्य कोई दूसरा काम शुरू करना चाहते हैं तो उन्हें सर्वप्रथम उस कार्य के विषय में एक दो वर्ष का पूर्ण प्रशिक्षण लेना आवश्यक है अन्यथा वह काम शुरू करना घाटे का सौदा होगा।

भारत सरकार द्वारा प्रधानमंत्री रोजगार योजना के तहत एक वर्ष में, एक लाख बेरोजगारों को, एक लाख या उससे अधिक की राशि रोजगार मुहैया कराने के लिए दी जाती है। इस योजना के माध्यम से पैतृक व्यवसायों को अधिक प्रोत्साहन मिला और लाखों लोगों ने शहरों में जाने के बजाय अपने ही स्थान पर व्यवसाय प्रारंभ किए। इस योजना के माध्यम से आप भी स्वयं का व्यवसाय लगा सकते हैं। इस योजना के पात्र व्यक्ति को रोजगार कार्य का पंजीयन एवं आय जाति, प्रमाण पत्र लेकर जिला उद्योग केंद्र से जानकारी ली जा सकती है। इन सारी बातों के बाद भी बेरोजगारों को कठिनाई महसूस होती है तो, उद्यमिता विकास केंद्र द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'उद्यमिता' सहायता ली जा सकती है।

वर्तमान में लाखों लोग निठल्ले बैठे हैं। अपनी योग्यता के मुताबिक काम न मिलने पर बैठने से अच्छा है कि विभिन्न योजनाओं का लाभ लेकर स्वयं का उद्यम या इकाई खोलें। शर्त है कि आप, संयम, लगन एवं योजनाशील व विषम परिस्थितियों में भी कुशल योग्यता दिखाकर अपने व्यवसाय की स्थापना करने में सक्षम हों।

संदीप तंवर
सिवनी मालवा, होशंगाबाद

प्रतियोगी परीक्षाओं में सहायक

मैं *कुरुक्षेत्र* पत्रिका का नियमित पाठक हूं। *कुरुक्षेत्र* ग्रामीण विकास संबंधित सूचनाओं की श्रेष्ठ पत्रिका है। इसमें लिखे लेखों से ग्रामीण विकास की जानकारी ही नहीं मिलती अपितु उनकी समस्याओं से भी हम रूबरू होते हैं। *कुरुक्षेत्र* विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में सहायक होती है।

विनय कुमार
फतेहगंज, फैजाबाद (उ.प्र.)

इंदिरा आवास योजना में लाभार्थियों के चयन में खुलापन और पारदर्शिता सुनिश्चित की जाए

डा. रघुवंश प्रसाद सिंह

ग्रामीण विकास मंत्री डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने इंदिरा आवास योजना में लाभार्थियों के चयन में खुलापन और पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए निर्देश दिए हैं। श्री सिंह ने पंचायती राज संस्थाओं को यह परामर्श भी दिया गया है कि वे प्रत्येक पंचायत क्षेत्र में पात्र लाभार्थियों की सूची गरीबी के घटते क्रम में बनाएं और हर वर्ष लक्ष्यानुसार इस सूची में लाभार्थियों का चयन करें। लाभार्थियों के चयन में गड़बड़ी की रोकथाम के लिए पंचायती राज संस्थाओं को जिम्मेदारी सौंपी गई है। ग्रामीण विकास मंत्री ने इस योजना की प्रगति की समीक्षा विभाग के उच्चाधिकारियों के साथ बैठक में की।

गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत आवास उपलब्ध कराने की सरकार की महत्वाकांक्षी योजना चल रही है। इस योजना के अंतर्गत शुरू से लेकर अब तक 1.15 करोड़ पक्के मकान बनाए गए हैं, जिन पर लगभग 20 हजार करोड़ रुपये व्यय हुए हैं। उन्होंने बताया कि वित्तीय वर्ष 2003–04 में 1870.50 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था उसके मुकाबले इस वर्ष 30 प्रतिशत वृद्धि करके 2460 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है तथा 15.62 लाख घरों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया है। उन्होंने बताया कि निर्माण सामग्रियों की लागत में हुई वृद्धि देखते हुए पूर्व से प्रचलित 20 हजार रुपये प्रति इकाई निर्माण लागत को बढ़ाकर 25 हजार रुपये कर दिया गया है। कच्चे घरों के मरम्मत कार्य के लिए भी पूर्व में प्रचलित 10 हजार रुपये की राशि को बढ़ाकर 12,500 रुपये कर दिया गया है।

इस वित्तीय वर्ष में 1,240 करोड़ रुपये केंद्र के हिस्से के रूप में ग्रामीण विकास अभिकरणों को जारी किए जा चुके हैं। जारी की गई राशि से बनने वाले घरों में न्यूनतम 60 प्रतिशत अनुसूचित जाति/जनजाति के लाभार्थियों के लिए बनाए जाएंगे। लाभार्थियों का चयन ग्राम सभा द्वारा किया जाएगा।

इस वर्ष सरकार द्वारा बाढ़ की विभीषिका से ग्रस्त परिवारों के लिए इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत विशेष तौर पर परियोजना स्वीकृत की गई, जिसके अंतर्गत बिहार राज्य के 15 जिलों में 562.50 लाख रुपये का अतिरिक्त प्रावधान किया गया है जिससे 2,800 घरों का निर्माण करवाया जाएगा।

इंदिरा आवास योजना के अंतर्गत घरों का निर्माण लाभार्थियों द्वारा स्थानीय तकनीकी का उपयोग करते हुए स्वयं किया जाता है। निर्माण सामग्री का क्रय लाभार्थी द्वारा स्वयं किया जाना है। लाभार्थी द्वारा स्वयं तथा परिवार के सदस्यों के श्रम से मकान का निर्माण करना है।

ग्रामीण विकास विभाग द्वारा गरीबी रेखा से ऊपर रहने वाले परिवारों को घर की सुविधा प्रदान करने के लिए ग्रामीण ऋण सह सब्सिडी आवास योजना चलाई जा रही है, जिसमें 12,500 रुपये का अनुदान दिया जाता है और लाभार्थी को शेष बैंक से ऋण प्राप्त करना होता है।

महिलाओं के सशक्तीकरण के प्रयोजन से इंदिरा आवास योजना का लाभ परिवार की महिला सदस्यों के नाम देने के लिए दिशा–निर्देश जारी करने का आदेश दिया है। इन कार्यों में पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए केंद्र सरकार तथा राज्य सरकार के अधिकारियों को निरीक्षण के निर्देश दिए गए हैं। ग्रामीण विकास मंत्रालय की ओर से क्षेत्र अधिकारियों की राज्यवार नियुक्ति की गई है।

जनजातीय इलाकों में नए शैक्षणिक परिसर

जनजातीय इलाकों में महिला साक्षरता बढ़ाने के लिए निम्न साक्षरता क्षेत्रों में शैक्षणिक परिसरों की योजनाओं को 10वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान जारी रखने को मंजूरी दे दी गई है। राज्य सरकारों से अछूते इलाकों में नए परिसर खोलने तथा चालू परिसरों को जारी रखने के लिए गैर–सरकारी संगठनों से प्रस्तावों को भेजने का अनुरोध किया गया है।

गैर–सरकारी संगठनों/राज्य सरकारों द्वारा चलाई जाने वाली संस्थाओं के प्रस्तावों पर, चालू परियोजनाओं के रखरखाव और परिचालन संबंधी प्रतिबद्ध दायित्वों को पूरा करने के बाद नए शैक्षणिक परिसरों की मंजूरी के लिए धन उपलब्ध होने की स्थिति में साल दर साल के आधार पर विचार किया जाता है। 10वीं पंचवर्षीय योजना के पहले दो वर्षों में मंत्रालय ने आंध्र प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र उड़ीसा, राजस्थान और तमिलनाडु में 12 नए शैक्षणिक परिसरों को मंजूरी दी है।

संपादकीय

जीवन को सुसंस्कारित एवं विवेकशील बनाने में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारतीय मनीषा में 'असतो मा ज्योतिर्गमय' की जो कामना की गई है वह अशिक्षा के अंधकार से निकलकर ज्ञान के प्रकाश में जाने की कल्पना ही है। शिक्षा ज्ञान और प्रकाश के तर्क और बौद्धिक विकास के वातायन खोलती है। शिक्षा मानव जीवन का सबसे आवश्यक संस्कार, सामाजिक परिवर्तन का आधार और आर्थिक उन्नति का एक सशक्त साधन है। यह हमें मनुष्यता, सहिष्णुता, नैतिकता और बंधुत्व का पाठ पढ़ाती है- एक नया, उन्नत और योग्य मनुष्य बनाती है। आधुनिक समय में देश के विकास के सोपान चढ़ पूर्ण विकसित बनने का लक्ष्य तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक कि देश के सभी नागरिक साक्षर नहीं हो जाते। इस तथ्य का ज्ञान राष्ट्र निर्माताओं को था। तभी तो संविधान की रचना करते समय उन्होंने राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों में सबके लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा को शामिल किया और स्वतंत्रता प्राप्ति के दस वर्षों के भीतर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को निःशुल्क शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य रखा। किंतु यह लक्ष्य अभी तक प्राप्त नहीं हो पाया है। यह उतना आसान भी नहीं था। नव-स्वतंत्र राष्ट्र के सम्मुख स्थितियां विषम थीं और संसाधन थे कम! 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 1992 में अद्यतन किया गया जिसके अंतर्गत इसे और अधिक जनोन्मुखी और व्यवहारपरक बनाने का प्रयास किया गया ताकि अधिकाधिक लोगों को शिक्षित किया जा सके और उन्हें विकास के पथ पर आगे ले जाया जा सके। इन प्रयासों से लाभ भी मिले और काफी बड़े ऐसे वर्ग को साक्षर बनाने में, शिक्षा-प्रक्रिया से जोड़ने में सफलता मिली जो अब तक उससे वंचित था। लेकिन संपूर्ण साक्षरता का लक्ष्य निरंतर दूर बना रहा। आज भी देश की 30 करोड़ से अधिक आबादी शिक्षा के आलोक से वंचित है। इनमें से अधिकांश वे लोग हैं जो विपन्न और साधनहीन हैं। यह समूचे देश के लिए चिंता का विषय है।

देश के 58वें स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर देशवासियों को संबोधित करते हुए राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के भाषण में शिक्षा की मौजूदा स्थिति पर चिंता की झलक सर्वोपरि थी। इस समस्या से निपटने का मार्ग प्रस्तुत करते हुए उन्होंने शिक्षा को एक मिशन मानने और इसे रोजगारपरक बनाने का सुझाव दिया। राष्ट्रपति ने कहा कि भारत वर्ष 2020 तक एक विकसित राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में है। उभरते हुए आधुनिक भारत को विश्व के अनुकूल रोजगार योग्य कौशल प्राप्त करना है। हमें समाज के उन बच्चों के बारे में सोचना चाहिए जो अल्पपोषित हैं और उनमें से थोड़े से बच्चे ही आठ वर्ष तक की अपनी स्कूली शिक्षा पूरी कर पाते हैं। शिक्षा अब हर भारतीय बच्चे का मौलिक अधिकार है इसलिए प्रत्येक माता-पिता को अपने बच्चों को नजदीकी स्कूल में ले जाकर दाखिल करवाना चाहिए। विगत 50 वर्षों से सभी सरकारें सर्वव्यापी शिक्षा का राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कटिबद्ध रही हैं और शिक्षा पर बजटीय आवंटन में भी लगातार वृद्धि की जा रही है। राष्ट्रपति ने ग्रामीण क्षेत्रों और शहरों में रहने वाले गरीबों को शिक्षा के प्रति जागरूक बनाने पर बल दिया। इसके लिए गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक और लोकोपकारी संस्थाओं से तथा मीडिया से आगे आने और लोगों में जागरूकता लाने की अपील की।

शिक्षा वास्तविक अर्थों में सत्य की खोज है। यह ज्ञान और प्रकाश की अंतहीन यात्रा है। ऐसी यात्रा मानवतावाद के विकास के लिए ऐसे नए रास्ते खोलती है जहां ईर्ष्या, घृणा, शत्रुता, संकीर्णता और वैमनस्य का कोई स्थान न हो। यह मनुष्य को संपूर्ण, श्रेष्ठ, नेक इंसान और विश्व के लिए एक उपयोगी व्यक्ति बनाती है। सही मायनों में विश्व बंधुत्व ऐसी शिक्षा के लिए ढाल बन जाता है। यथार्थपरक शिक्षा मनुष्य की गरिमा और आत्मसम्मान बढ़ाती है। यदि शिक्षा की यथार्थता को प्रत्येक व्यक्ति समझ ले और मानवीय गतिविधियों के प्रत्येक क्षेत्र में उसे अपना ले तो रहने के लिए विश्व और भी बेहतर स्थान बन जाएगा।

सर्वशिक्षा अभियान को गतिशील बनाने के लिए हमने यह अंक शिक्षा पर केंद्रित किया है। इस अंक में शामिल लेखों से पाठकों को स्वतंत्र भारत में शिक्षा तथा शिक्षण प्रक्रिया के क्रमिक विकास, उसमें शामिल की गई नई-नई नीतियों के साथ विभिन्न राज्यों में चलाए जा रहे कार्यक्रमों की जानकारी मिलेगी। इसमें प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक विभिन्न स्तरों पर शिक्षा की स्थिति की जानकारी शामिल की गई है। साथ में सभी स्थायी स्तंभ तो हैं ही। अंक आपको कैसा लगा, हमें लिखना न भूलें।

एक ही प्रण, प्रतिक्षण, सर्व शिक्षा-शिक्षण

भारत में प्राथमिक शिक्षा

संगीता सारस्वत

यह निर्विवाद सत्य है कि शिक्षा मानव जीवन का सबसे आवश्यक संस्कार, सामाजिक परिवर्तन का आधार और आर्थिक उन्नति का एक सशक्त साधन है। शिक्षा ही वह संस्कार है जो व्यक्तियों को भिन्नता के आधार पर भी योग्य बनाता है। गुण और योग्यता व्यक्ति के अंदर विद्यमान हैं, शिक्षा द्वारा इन गुणों और योग्यता को अधिकाधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए हमारे संविधान निर्माताओं ने संविधान (1950) की धारा 45 में प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के उद्देश्य से नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को राज्य का एक नीति-निर्देशक सिद्धांत घोषित किया।

यह निर्विवाद सत्य है कि शिक्षा मानव जीवन का सबसे आवश्यक संस्कार, सामाजिक परिवर्तन का आधार और आर्थिक उन्नति का एक सशक्त साधन है। शिक्षा ही वह संस्कार है जो व्यक्तियों की भिन्नता के आधार पर भी योग्य बनाता है। महात्मा गांधी के अनुसार "शिक्षा से मेरा अभिप्राय बच्चे या प्रौढ़ के शरीर, मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों का सर्वांगीण विकास करना है" शिक्षा द्वारा इन गुणों तथा योग्यता को अधिकाधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए हमारे संविधान की धारा 45 में प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के उद्देश्य से अग्रांकित शब्दों में निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा को राज्य का एक नीति–निर्देशक सिद्धांत घोषित किया "राज्य इस संविधान के कार्यान्वित किए जाने के समय से दस वर्ष के अंदर सब बच्चों के लिए जब तक वे चौदह वर्ष की आयु पूर्ण नहीं कर लेंगे, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा।"

फोटो : कुमार रवि

सन् 1982 में दादाभाई नौरोजी ने भारतीय शिक्षा आयोग (इंटरकमीशन) के सामने प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य बनाने की मांग रखी थी। यद्यपि उनकी इस मांग को स्वीकार नहीं किया गया, परंतु इस मांग ने अनिवार्य तथा निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा की आवश्यकता की ओर सबका ध्यान आकर्षित जरूर किया। सन् 1893–1996 के मध्य बड़ौदा के महाराज सियाजीराव गायकवाड़ ने अपनी संपूर्ण रियासत में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की। इसके उपरांत 1918 में विट्ठलभाई पटेल के प्रयासों से एक कानून बनाकर मुंबई म्युनिसिपल क्षेत्र में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की गई। इसका अनुकरण करते हुए 1919 में बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल और उड़ीसा में, 1920 में मध्य प्रदेश, 1926 में असम में और 1931 में मैसूर में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के विषय में अधिनियम बनाए गए। आजादी के पश्चात 1948 में शिक्षा को सही दिशा देने के लिए पहला शिक्षा आयोग सर्वपल्ली राधाकृष्णन के नेतृत्व में गठित किया गया। इसके बाद सी. ए.बी.ए. शिक्षा समिति (1949), लक्ष्मण स्वामी

मुरलीधर शिक्षा आयोग (1952), रामचंद्रन शिक्षा समिति (1956), बुनियादी शिक्षा समिति (1957), दुर्गाबाई देशमुख शिक्षा समिति (1958), हंसा मेहता शिक्षा समिति (1962–64), भक्त वत्सल शिक्षा समिति (1963), कोठारी शिक्षा आयोग (1964–66), पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968), चट्टोपाध्याय आयोग (1985), दूसरी राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), आचार्य राममूर्ति शिक्षा समिति (1990), जनार्दन रेड्डी शिक्षा समिति (1992), प्रो. यशपाल शिक्षा समिति (1993), जैसे अनेक शिक्षा आयोगों/समितियों का गठन किया गया। इनके द्वारा की गई संस्तुतियों की रिपोर्ट लागू भी नहीं की गई कि दूसरे का गठन कर दिया गया। यह सिलसिला चलता गया और सभी रिपोर्टों को लागू करने की दिशा में शिथिलता बरती गई। इसके अनुसार समाज में समता और न्याय की भावना को फैलाने के लिए इस प्रणाली को अपनाया जाना जरूरी है। समान गुणवत्ता वाली शिक्षा देने से विकास की संभावनाओं का लाभ उठाने का मौका सभी को मिल सकेगा। आयोग का मानना था कि इससे सामाजिक जुड़ाव और राष्ट्रीय एकता की राह खुलेगी लेकिन आयोग की सिफारिश नहीं मानी गई। पूंजी प्रधान चलने वाले प्राइवेट और विशिष्ट वर्गीय शिक्षा केंद्रों को बंद नहीं किया गया। बच्चों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा देने की जगह धीरे–धीरे अंग्रेजी की प्रधानता को बढ़ाया गया। सामाजिक मूल्य और कौशल के विकास में शिक्षा की भूमिका को नकारा गया है।

वर्ष 1960 तक राज्यों को अपने क्षेत्र के 6 से 14 वर्ष के बालकों के लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था करनी थी किंतु एक अनुमान के अनुसार 1960 तक प्राथमिक विद्यालयों में (कक्षा 1 से 5 तक) कुल 62 प्रतिशत बालक–बालिकाओं ने नामांकन कराया। इस समय तक प्राथमिक पाठशालाओं की संख्या 3 लाख थी। 11 से 14 आयु वर्ग की जनसंख्या के 22 प्रतिशत बालक–बालिकाओं ने उच्च प्राथमिक शिक्षा (कक्षा 6 से 8 तक) के लिए नामांकन कराया तथा 11 से 14 वर्ष आयु वर्ग के कुल 30 प्रतिशत ने उच्च प्राथमिक पाठशालाओं में नामांकन कराया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में पुनः शिक्षा के लोक–व्यापीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए व्यापक चिंता व्यक्त की गई और शिक्षा को हर कहीं और हर किसी तक, गांव–गांव और बच्चे–बच्चे तक सहज व सुलभ बनाने के लिए समय–समय पर अनेक शिक्षा कार्यक्रम जैसे आपरेशन ब्लैक बोर्ड (1988), न्यूनतम लान स्तर (1989), सुस्पष्ट प्राथमिक शिक्षा (1992), गैर–पारंपरिक शिक्षा (1979) सहित अनेक योजनाओं को शुरू किया गया। सन् 1991 की जनगणना के अनुसार लगभग 10 करोड़ बालक–बालिकाओं ने प्राथमिक शिक्षा में अध्ययन हेतु नामांकन कराया जो सन् 1951 की तुलना में पांच गुना था। सन् 1996–97 तक प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों का नामांकन लगभग 15 करोड़ 15 लाख तक पहुंच गया है। वर्ष 2001 में एक हजार बच्चों में से 882 बच्चे स्कूल जाने लगे थे और उनमें भारतीय ग्रामीण तथा शहरी बच्चों का प्रतिशत क्रमशः 43.78 तथा 56.22 रहा।

उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से सरकार द्वारा किए गए विभिन्न प्रयासों के फलस्वरूप प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से शिक्षण संस्थाओं, शिक्षकों की संख्या तथा विद्यालयों में बच्चों के नामांकन में प्रभावी रूप से बढ़ोत्तरी हुई है किंतु जनसंख्या को देखते हुए यह संतोषजनक नहीं है। करोड़ों रुपये पानी की तरह बह रहे हैं पर नतीजे असंतोषजनक हैं। केंद्रीय सरकार ने 86वें संशोधन के जरिए 6 से 14 वर्ष की उम्र के बच्चों को शिक्षा का मौलिक अधिकार दिलाया है, पर सरकारी स्कूल प्रायः खाली हैं। राज्य सरकारें 'स्कूल चलो अभियान' चलाती हैं। अभियान असफल हो रहे हैं। अभिभावक भी कम वेतन वाले अप्रशिक्षित अध्यापकों से संबंधित मंहगे पब्लिक स्कूलों में ही मंहगी फीस देकर बच्चों को पढ़ाना बेहतर मान रहे हैं। शिक्षा के लिए जागरूकता बढ़ी है, पर सरकारी स्कूलों के प्रति अविश्वसनीयता भी। शहरों की देखा–देखी अब गांवों में भी निजी स्कूलों का चलन बढ़ता जा रहा है। जो शहर पब्लिक स्कूलों की तर्ज पर संचालित होने का दम भरते थे। निजी ग्रामीण स्कूल शिक्षा के नाम पर खुलेआम ठगा–ठगी का ठिकाना बन गए हैं। शिक्षा प्रविधि और संसाधनों की उपलब्धता पर जोर देने की बजाय ये स्कूल ग्रामीण अभिभावकों की असहनीय भावना का नाजायज शोषण करते हैं, जो अपने बच्चों को शहर की भांति शिक्षा मुहैया कराने में असमर्थ हैं। इस उदासीनता को हवा दे रही है प्राथमिक सरकारी विद्यालयों की जर्जर अवस्था। विद्यालयों में न तो श्यामपट हैं और न ही छात्रों के बैठने के लिए फर्श हैं। अधिकांश विद्यालयों के भवन गिरे हुए हैं और कुछ धराशायी होने की स्थिति में हैं। यहां तक कि शहर के विद्यालयों में तो सामानों के साथ–साथ विद्यार्थियों का भी अभाव होने लगा है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या में उम्र बढ़ने के साथ ही दर्ज की जाने वाली गिरावट शहरी क्षेत्रों की तुलना में अधिक रही है क्योंकि शिक्षा को लेकर उन बच्चों की आशाएं कुछ और होती हैं किंतु ग्रामीण बच्चों का रुख शिक्षा के प्रति कुछ और ही होता है।

सुविधाओं और संसाधनों के अभाव के बावजूद ग्रामीण निजी स्कूल अपने प्रति आकर्षण में दिनों दिन सुधार करते जा रहे हैं, क्योंकि गांवों में मौजूद सरकारी स्कूलों का शिक्षण उनसे भी कहीं अधिक खराब है। विश्व बैंक और समाचार पत्रों में प्रकाशित कुछ सूचनाओं के अनुसार विभिन्न राज्यों के शिक्षा कर्मी एक चौथाई कार्य दिवसों पर भी स्कूल जाना जरूरी नहीं समझते हैं इसलिए निजी संस्थानों के प्रति लोगों की विश्वसनीयता बढ़ती जा रही है। विश्व बैंक की कुछ ताजा रिपोर्टों के अनुसार आंध्र प्रदेश और असम में प्राथमिक शिक्षकों की अनुपस्थिति दर को 31 प्रतिशत पाया गया। उत्तर प्रदेश में प्राथमिक शिक्षक 26 फीसदी कार्य दिवसों पर स्कूल जाना मुनासिब नहीं समझते। उत्तरांचल में प्राथमिक शिक्षकों के स्कूल में गायब रहने की दर 25 प्रतिशत तथा राजस्थान और कर्नाटक में 23 प्रतिशत है। पश्चिम बंगाल और गुजरात में प्राथमिक शिक्षकों की अनुपस्थिति दर 21 तथा हरियाणा में 19 प्रतिशत है। सामाजिक चेतना के हिसाब से अग्रणी समझे जाने वाले केरल तथा पंजाब में यह दर 18 प्रतिशत है। जबकि तमिलनाडु में 17 और उड़ीसा में 14 प्रतिशत कार्य दिवसों पर प्राथमिक शिक्षक स्कूलों में अनुपस्थित मिले। सरकार के उदासीन रवैये का ही यह परिणाम है कि इतने दिनों तक काम से गायब रहने के बाद भी किसी की कोई जबावदेही नहीं है।

प्राथमिक शिक्षा में जीवन के विकास की आधारशिला रखी जाती है। इस अवधि में

बच्चों के मस्तिष्क की संवेदनशीलता बढ़ती है एवं उनका शारीरिक विकास होता है। उनमें जो आदतें एवं सामाजिक विश्वास इस अवधि में पैदा किया जाता है, वह संपूर्ण जीवन में बना रहता है। इस अवधि में उनमें ग्रहण करने की शक्ति अधिक होती है तथा लेखन एवं गणित की जो शिक्षा दी जाती है, वह उन्हें बाद में काम आती है। खेलों के प्रति झुकाव का भी यही समय है। मनुष्य के समुन्नत विकास के लिए नई पीढ़ी को तैयार करने की बहुत बड़ी जिम्मेदारी शिक्षा पर ही निर्भर है। इस आयु वर्ग में जो आदतें व जिम्मेदारी का अहसास डाला जाता है वह मिटता नहीं है। इस अवधि में यदि अच्छी शिक्षा दी जाती है तो जीवन में पीछे मुड़कर देखने की आवश्यकता नहीं होती, व्यक्ति समायोजन कर लेता है।

अब तक पिछले पांच दशकों में सरकार द्वारा इस संबंध में जो भी नीतियां बनाई गईं उनके क्रियान्वयन में अरबों–खरबों रुपये खर्च भी किए, कुछ नवीन प्रयोग और नए–नए कार्यक्रम भी चलाकर लक्ष्य पूर्ति किए गए, लेकिन कोई खास अच्छे परिणाम नजर नहीं आए। नई शताब्दी की चुनौतियों का सामना करने के लिए यह आवश्यक है कि अब पुराने प्रयोगों, अनुभवों और कमियों को दोहराया न जाए और कुछ ऐसे विशेष और ठोस प्रयास किए जाएं जिनमें असफलतापूर्ण गुंजाइश नहीं के बराबर हो। इस दिशा में पहले कदम के रूप में सरकार को प्रत्येक दशा में देश के छोटे से छोटे गांव, माजरे अथवा बस्ती में चाहे वह दूर–दराज के क्षेत्र हों, पहाड़ी और दुर्गम इलाके हों, रेगिस्तानी अथवा वनों से आच्छादित सुदूरवर्ती जन–जातीय क्षेत्र हों, के बच्चों को प्राथमिक विद्यालय की सुलभता उनके पास ही की जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त इन विद्यालयों की सुचारू क्रिया विधि के लिए निम्न सुझावों को भी अमल में लाने की खासी आवश्यकता है :–

- देश के सभी क्षेत्रों में विद्यालयों की स्थापना और उसमें आवश्यक भौतिक सुविधाएं जुटाने के लिए सरकार को प्रयास करना चाहिए। हमारे संविधान में की गई व्यवस्थाओं और उसकी भावनाओं के अनुरूप पूरे देश में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाते हुए बच्चों को आवश्यक रूप से विद्यालयों में भेजने हेतु बाध्यकारी बनाना चाहिए तथा आवश्यकतानुसार कानूनी सहारा भी लेना चाहिए।
- पोषक आहार और पाठ्य सामग्री की व्यवस्था करते हुए गरीब परिवारों को सरकार की विभिन्न कल्याणकारी और विकास योजनाओं से लाभान्वित कर बच्चों पर उनकी आर्थिक निर्भरता को कम करना चाहिए ताकि अभिभावक भी निःसंकोच अपने बच्चों को विद्यालय भेजने हेतु तत्पर होंगे।
- प्राथमिक शिक्षा को एक सघन अभियान के रूप में चलाकर सम्पूर्ण जन–जागृत्ति हेतु जन सहयोग और जन सहभागिता को प्राप्त किया जाना चाहिए ताकि लोगों में अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए प्ररेणा उत्पन्न हो और अच्छे तथा आश्चर्यजनक परिणाम सामने आएं।
- अभिभावकों और शिक्षकों का आर्थिक शोषण कराने वाले पब्लिक, कान्वेंट, मांटेसरी अथवा मॉडल आदि नामों से प्रचलित स्कूलों पर प्रभावी अंकुश और नियंत्रण रखने की आवश्यकता है। सरकारी प्राथमिक स्कूलों की उपर्युक्त कमियों पर दृष्टिपात करने के बाद निजी क्षेत्र के शिक्षा व्यवसायियों ने शिक्षा को अच्छी मुनाफाखोरी का धंधा बना लिया है जिसे रोकना अत्यंत आवश्यक है।
- प्राथमिक शिक्षा पूरी तरह निःशुल्क न करके केवल उन गरीब लोगों के लिए निःशुल्क रखी जाए जो वास्तव में स्कूल का खर्च उठाने के योग्य नहीं हैं। ऐसे लोग जो अपने बच्चों की शिक्षा का बोझ उठाने में सक्षम हैं उनसे किसी न किसी रूप में आर्थिक सहायता प्राप्त कर ली जानी चाहिए। इससे ऐसे अभिभावक व बच्चों में शिक्षा अहमियत होगी और सरकार के धनाभाव की समस्या भी समाप्त होगी। कई विद्यालयों का निरीक्षण करके देखा गया है कि जिन विद्यालयों में बच्चों में किसी प्रकार की फीस आदि नहीं ली जाती है बल्कि छात्रवृत्ति व स्वल्पाहार के रूप में सहायता की जाती है उन विद्यालयों के छात्रों के अभिभावक बच्चों की शिक्षा को लेकर निष्क्रियता दिखाते हैं।
- शिक्षा की व्यवस्था यदि स्वयंसेवी संस्थाओं की देखरेख में होगी तो अव्यवस्थाओं पर अंकुश लगा रहेगा साथ ही अधिक सार्थक परिणाम प्राप्त होंगे।
- देश के सम्मुख 2010 तक 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के लगभग 18 करोड़ बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करना बहुत बड़ी चुनौती है। इस लक्ष्य को पूरा करने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को और अधिक अधिकार संपन्न बनाकर इस अभियान से जोड़ा जाना चाहिये तथा चयनित प्रतिनिधियों को इस दायित्व के निर्वहन के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- उच्च शिक्षा में अध्ययनरत छात्रों और शोधकर्ताओं को शिक्षा के प्रचार–प्रसार से जोड़ना चाहिए तथा शिक्षण संबंधी सभी संस्थाओं की इस क्षेत्र में भागीदारी भी सुनिश्चित और प्रोत्साहित की जानी चाहिए।

कुल मिलाकर स्थिति यह है कि आज देश के बच्चों को शिक्षा के अवसर और सुविधा तो आजादी पूर्व की तुलना में कई गुना ज्यादा उपलब्ध हैं और एन.सी.सी. तथा स्काउट एवं गाइड जैसे शैक्षिक कार्यक्रम भी बच्चों का समग्र विकास करते दिख रहे हैं, किंतु शिक्षा को सामाजिक विकास का सहभागी होना चाहिए। शिक्षा नीति के मूल में स्पष्ट दर्शन और विचार का समावेश होना चाहिए। शिक्षा नीति के क्रियान्वयन के स्वतंत्र एवं स्वायतत्ता की आवश्यकता होनी चाहिए, शिक्षा के लिए उपयुक्त विकास मॉडल एवं तदनुसार तकनीकों का चयन करना चाहिए। शिक्षा नीति में राष्ट्रीय गौरव और देशभक्ति जगाने के उपाय एवं आध्यात्मिक शिक्षा पर जोर देना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में राजनीतिक शक्तियों के प्रवेश पर रोक लगाई जानी चाहिए। इसी आधार पर हम विश्व गुरु कहे जाने वाले समृद्ध भारत की कल्पना को फिर से साकार कर सकते हैं।

वर्तमान समय में सरकार ने अपने राष्ट्रीय एजेंडे में प्राथमिक शिक्षा को प्रमुख स्थान देते हुए यह संकल्प लिया है कि वह शीघ्र ही भारत के हर बच्चे को शिक्षित करने का प्रयास करेगी। अतः ग्राम पंचायतों, स्थानीय निकायों तथा सरकार के प्राथमिक शिक्षा में सर्वव्यापीकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। ❑

(लेखिका डी.एस. कालेज, अलीगढ़ में अर्थशास्त्र विभाग से संबद्ध हैं)

सर्वशिक्षा अभियान

प्रकाश नारायण नाटाणी

सर्वशिक्षा अभियान की 10 वर्षीय महत्वाकांक्षी योजना को अमली जामा पहनाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा 98,000 करोड़ रुपये की भारी-भरकम धनराशि की व्यवस्था की गई है और यथा आवश्यक राज्य सरकारों को समुचित धनराशि उपलब्ध भी कराई गई है। केंद्र सरकार द्वारा समस्त राज्य सरकारों को विश्वास में लेकर बड़े जोरशोर से इस अभियान को लागू भी किया गया। इस महत्वपूर्ण अभियान के अंतर्गत सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता के साथ-साथ उसके उपयोगी, उपयुक्त और गुणवत्तायुक्त होने पर भी जोर दिए जाने का लक्ष्य है।

देश के 6 से 14 वर्ष की आयु के प्रत्येक बालक को हर दशा में कक्षा 1 से 8 तक की अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराने के एक महत्वाकांक्षी लक्ष्य को लेकर केंद्र सरकार द्वारा वर्ष 2000–01 के बजट में 'सर्वशिक्षा अभियान' के क्रियान्वयन की घोषणा की गई। माह नवंबर 2000 से इसे लागू भी कर दिया गया, इस अभियान को बल प्रदान करने के लिए प्राथमिक शिक्षा को बच्चों के मौलिक अधिकार में सम्मिलित किए जाने हेतु बहुप्रतीक्षित 93वें संविधान संशोधन को भी वर्ष 2002–03 में राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो गई। इस सर्वशिक्षा अभियान की 10 वर्षीय महत्वाकांक्षी योजना को अमली जामा पहनाने के लिए केंद्र सरकार द्वारा 98,000 करोड़ रुपये की भारी–भरकम धनराशि की व्यवस्था की गई है और यथा आवश्यक राज्य सरकारों को समुचित धनराशि उपलब्ध भी कराई गई है। केंद्र सरकार द्वारा समस्त राज्य सरकारों को विश्वास में लेकर बड़े जोरशोर से इस अभियान को लागू भी किया गया। इस महत्वपूर्ण अभियान के अंतर्गत सभी बच्चों को प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता के साथ–साथ उसके उपयोगी, उपयुक्त और गुणवत्तायुक्त होने पर भी जोर दिए जाने का लक्ष्य है। इस प्रकार अगले 10 वर्षों के अंदर निर्धारित आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की समुचित व्यवस्था किए जाने हेतु इस अभियान के अंतर्गत सभी राज्य सरकारों की समुचित भागीदारी से देश के 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को निःशुल्क, संतोषजनक, गुणवत्तापरक, समयबद्ध तथा समेकित प्रयास करने पर विशेष बल देने हेतु देशभर में सर्वशिक्षा अभियान को संचालित किया गया है।

इस महत्वाकांक्षी अभियान को प्रारंभ करने के पीछे जो दर्शन रहा है, उसका हम सभी लोग आसानी से अंदाज लगा सकते हैं। इसे हमारा दुर्भाग्य ही माना जाना चाहिए कि विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र होने का गौरव प्राप्त हुए भी हमारे देश में अशिक्षा की विभीषिका हमारे माथे पर एक कलंक की भांति अंकित है। यद्यपि पिछले 57 वर्षों में इसे मिटाने के लिए अनेक प्रयास भी किए गए, अनेक शिक्षा आयोगों और समितियों का गठन किया गया, अनेक योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए गए, नए–नए

प्रयोगों और साक्षरता शिक्षा के प्रसार के नाम पर अरबों–अरबों की धनराशियां भी खर्च की गईं, लेकिन स्थिति में आशातीत परिवर्तन नहीं हो सका है। तमाम कोशिशों के बाद देश में साक्षरता की दर पिछले 57 वर्षों में 16–17 प्रतिशत से भले ही बढ़कर 66 प्रतिशत पहुंच गई है, लेकिन निरक्षरों की संख्या अभी भी बहुत अधिक है, केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा अप्रैल 2002 में जारी की गई रिपोर्ट के अनुसार 6–14 वर्ष की आयु वर्ग के स्कूल जाने योग्य 19 करोड़ बच्चों में से हमारे 3.5 करोड़ बच्चे स्कूलों से बाहर हैं, 8 जुलाई, 2003 को जारी यू.एन.डी.पी. की मानव विकास रिपोर्ट, 2003 के मुताबिक हमारे यहां ऐसे बच्चों की संख्या 4 करोड़ है। इस संबंध में हमारी एक अजीब विडंबना रही है कि देश में साक्षरता दर में निरंतर वृद्धि होने के बावजूद वर्ष 1991 तक निरक्षरों की संख्या में निरंतर वृद्धि परिलक्षित हुई। वर्ष 2001 की जनगणना के मुताबिक देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पहली बार निरक्षरों की कुल संख्या में कमी आई है। आंकड़ों के अनुसार अभी भी देश में निरक्षरों की संख्या 34 करोड़ है, साक्षरता में धीमी प्रगति और निरक्षरों की संख्या में कमी न आ पाने के पीछे जो प्रमुख कारण रहा, वह स्पष्ट तो यह है कि जिस गति से और जिस प्रतिबद्धता से हमें इस दिशा में प्रयास करने चाहिए थे, वह नहीं किए जा सके और हमारी साक्षरता योजनाओं की प्रभावशीलता और विश्वसनीयता उपयुक्त स्तर की नहीं बन पाई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही हमने इस दिशा में जो विशेष प्रयास किए, उनमें शिक्षा के व्यापक प्रसार के लिए भारतीय संविधान में नीति–निर्देशक तत्वों के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई कि राज्य 10 वर्षों के भीतर 6 से 14 वर्ष के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करेगा। इसका तात्पर्य यह था कि देश के 6–14 आयु वर्ग के सभी बच्चे वर्ष 1960 तक विद्यालयों में नामांकित हो जाएंगे। यह समय सीमा कालांतर में 1960 से बढ़ाकर 1972, तत्पश्चात् 1976 तथा पुनः 1990 कर दी गई। वर्ष 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति में 8 वर्षीय अनिवार्य शिक्षा की समयावधि का विभाजन करके 1990 तक पांचवीं कक्षा तक की शिक्षा तथा 1995 तक आठवीं कक्षा तक की शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। वर्ष 1992 में इसे निश्चित किया गया और अब 'सर्वशिक्षा अभियान' नामक एक नए कार्यक्रम के अंतर्गत इसे और भी आगे बढ़ाते हुए वर्ष 2010 तक इस लक्ष्य को प्राप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है, इससे साफ जाहिर है कि प्रारंभ से ही प्राथमिक शिक्षा को जितनी प्राथमिकता दिया जाना अपेक्षित था, वह संभव नहीं हो पाया अथवा उसके प्रति प्रशासनिक और राजनीतिक प्रतिबद्धता का अभाव रहा और कमोबेश इसी प्रकार की संभावनाएं अब सर्वशिक्षा अभियान के संबंध में देश के विभिन्न राज्यों में और विशेषकर उत्तरी भारत के राज्यों में दिखाई देने लगी हैं।

सर्वशिक्षा अभियान के प्रमुख लक्ष्य

देश में सभी बालकों को प्राथमिक शिक्षा की समुचित व्यवस्था किए जाने हेतु सरकार द्वारा पूर्व में यों तो अनौपचारिक शिक्षा योजना (1979), ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड योजना (1987), बेसिक शिक्षा परियोजना (1993), जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (1994), मध्याह्न भोजन योजना (1999), जैसी कई महत्वपूर्ण योजनाएं और कार्यक्रम संचालित किए गए हैं और इनका कई क्षेत्रों में कुछ अनुकूल प्रभाव भी दृष्टिगोचर हुआ है, किंतु सर्वशिक्षा अभियान में कई बार और प्रकार के उद्देश्य भी निर्धारित किए गए हैं जो इस प्रकार हैं–

- देश के 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के सभी बच्चों को कक्षा 1 से 8 तक की निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की वर्ष 2010 तक समुचित व्यवस्था करना।
- वर्ष 2010 की समाप्ति तक इन सभी बच्चों को उपयोगी एवं समुचित गुणवत्ता और संस्कारयुक्त शिक्षा प्रदान कराना।
- वर्ष 2010 तक प्रत्येक दशा में बालक और बालिकाओं में शैक्षिक असमानता और सामाजिक भेदभाव मिटाने के लिए सभी व्यवस्थाएं सुनिश्चित करना।
- सभी 6 से 11 वर्ष तक की आयु के बच्चों को प्रत्येक दशा में कक्षा 1 से 5 तक की पांच वर्ष की प्राथमिकता शिक्षा वर्ष 2007 तक प्रदान करना।
- 6 से 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को 8 वर्ष तक की उच्च प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा पूर्ण करना।
- प्रारंभिक स्तर पर सभी बच्चों को जीवनपयोगी और समाजोपयोगी समुचित गुणस्तर की शिक्षा की व्यवस्था किया जाना।
- प्रारम्भिक तथा उच्च प्राथमिक स्तर की (कक्षा 8 तक की) शिक्षा पूर्ण करने तक प्रत्येक दशा में सभी ऐसे बच्चों को विद्यालय में अध्ययनरत् रखना।
- सभी अवशिष्ट बच्चों को वर्ष 2003 तक 'स्कूल शिक्षा गारंटी' केंद्र की उपलब्धता सुनिश्चित करना। (जो पूरा नहीं हुआ)
- वर्ष 2003 तक ऐसे सभी बच्चों को जो स्कूल से ड्राप–आउट हो गए हैं, को वैकल्पिक स्कूल 'बैक टू स्कूल' शिविर की उपलब्धता सुनिश्चित करना। (जो पूरा नहीं हुआ)
- प्राथमिक शिक्षा के मौजूदा ढांचे का समुचित प्रकार से उपयोग करते हुए इसी अभियान के माध्यम से शिक्षा संबंधी सभी प्रयासों को एक सूत्र से बांधते हुए इसे अधिक क्रियाशील बनाना।

क्रियान्वयन की वर्तमान स्थिति

सर्वशिक्षा अभियान जैसी 98,000 करोड़ रुपये की 10 वर्षीय महत्वाकांक्षी इस योजना को काफी समय व्यतीत हो गया है। यदि इस अभियान की इस अवधि की उपलब्धियों पर दृष्टिपात किया जाए, तो स्थिति निराशाजनक प्रतीत होती है, इस अभियान के विभिन्न राज्यों में क्रियान्वयन की स्थिति के संबंध में स्वयं केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय की समय–समय पर जारी समीक्षा रिपोर्टों और उच्च स्तरों से जारी वक्तव्यों के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि अधिकांश राज्य सरकारों द्वारा इस अभियान के क्रियान्वयन हेतु अपेक्षित पहल नहीं की जा रही है। उल्लेखनीय है कि सर्वशिक्षा अभियान के समुचित क्रियान्वयन की जिम्मेदारी संबंधित राज्य सरकारों के सुपुर्द की गई है, लेकिन खास तौर से उत्तर प्रदेश, दिल्ली, बिहार, उड़ीसा, पंजाब, गोवा और झारखंड जैसे राज्यों में राज्य सरकारों का इस योजना के क्रियान्वयन के प्रति रवैया संतोषजनक नहीं रहा है। केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार देशभर के स्कूल न जाने वाले बच्चों

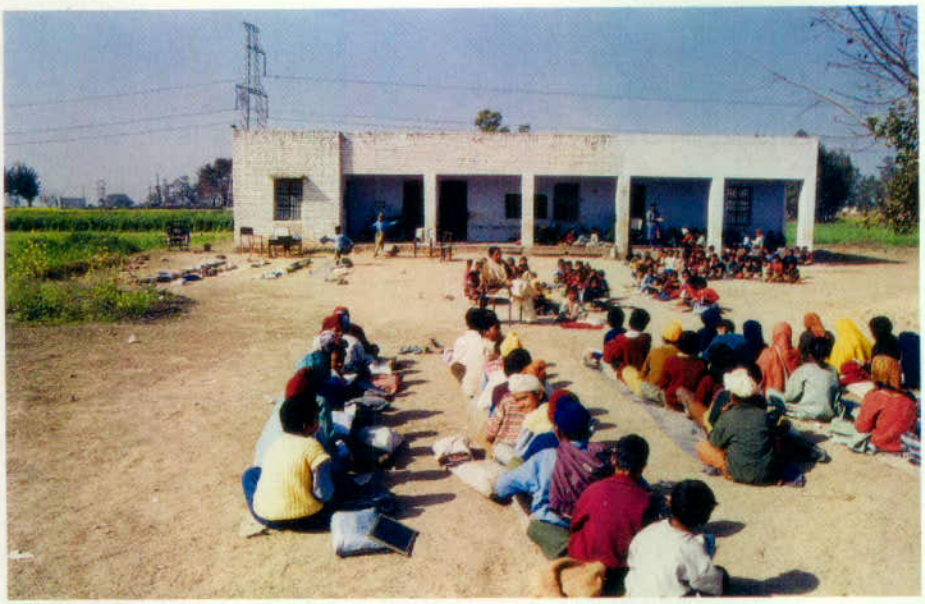

में से बिहार में 46 लाख, उत्तर प्रदेश में 40 लाख, मध्य प्रदेश में 7 लाख और राजस्थान में 8 लाख बच्चे अभी भी स्कूल से दूर हैं। इसी प्रकार देशभर में स्कूल जाने से वंचित बच्चों में आधे तो उत्तर प्रदेश, बिहार एवं पश्चिम बंगाल के राज्यों के हैं। बिहार के संदर्भ में मानव विकास मंत्रालय की इस रिपोर्ट में मन्तव्य रहा है कि इस अभियान के क्रियान्वयन के प्रति राज्य सरकार का रुख अधिक गंभीर नहीं रहा है, बल्कि उससे अधिक वहां की स्थानीय संस्थाएं अधिक गंभीर प्रतीत होती हैं। मंत्रालय की नजर में शिक्षकों के अनेक पद खाली होने के कारण भी बिहार में इस योजना का भली–भांति क्रियान्वयन संभव नहीं हो पाया है।

उत्तर प्रदेश के संबंध में केंद्रीय मानव कल्याण मंत्रालय का स्पष्ट मत रहा है कि वहां अधिकारियों को फटाफट तबादला नीति, हजारों रिक्त पड़े शिक्षकों के पद और बढ़ते शिक्षक–छात्र अनुपात ने इस अभियान के क्रियान्वयन को बुरी तरह प्रभावित किया है। इस संबंध में मंत्रालय द्वारा उत्तर प्रदेश सरकार को प्रेषित एक पत्र के मजमून से यह स्पष्ट हो जाता है, जिसमें उत्तर प्रदेश सरकार से अपेक्षा की गई है कि सरकार शिक्षकों के 90 हजार रिक्त पदों को शीघ्र करना शुरू करे जो वर्षों से खाली पड़े हैं। इसके चलते राज्य में शिक्षक–छात्र अनुपात 1 : 80 तक पहुंच गया है, जबकि आदर्श स्थिति 1 : 40 की है और इसको आदर्श स्थिति में लाने के लिए यहां लगभग 1.5 लाख नए शिक्षकों की नियुक्ति की आवश्यकता है जबकि ऐसी न कोई समुचित प्रक्रिया ही चल रही है और न ही वैकल्पिक शिक्षा केंद्रों को खोलने के लिए कोई उत्सुकता दिखाई जा रही है। इस संबंध में एक और विशेष तथ्य यह भी है कि इस अभियान को लागू करते समय प्रदेश सरकार द्वारा दलित बच्चों और विशेष रूप से बालिकाओं पर जोर दिए जाने की बात की गई थी। लेकिन यह विडंबना ही है कि प्रदेश में स्कूलों से दूर रहे बच्चों में अधिक तादाद इन्हीं वर्गों की है।

उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे पिछड़े राज्यों के अतिरिक्त मंत्रालय की नजर में दिल्ली, पंजाब और गोवा जैसे राज्यों में भी इस अभियान के प्रति संबंधित सरकारों की खास प्रतिबद्धता दिखाई नहीं दे रही है। इसी प्रकार संपन्न और विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं के मामले में क्रियाशील रहने वाले राज्यों में भी इस योजना के क्रियान्वयन की स्थिति अच्छी नहीं हैं। इस अभियान के अंतर्गत सबसे पहला कार्य जो संबंधित राज्य सरकार को करना था, वह स्कूल से दूर रह गए बच्चों की संख्या का सर्वेक्षण के माध्यम से सही–सही अंदाजा लगाना था। यद्यपि अधिकांश राज्यों में घर–घर सर्वेक्षण करवाकर यह अंदाजा लिया गया है कि स्कूल से दूर रहे बच्चों की संख्यां वहां लगभग कितनी है, लेकिन दिल्ली गोवा में इस प्रकार के प्रारंभिक सर्वेक्षण भी राज्य सरकारों द्वारा अब तक नहीं करवाए गए हैं। विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन में अग्रणी रहने वाली पंजाब सरकार द्वारा भी इस योजना के प्रति गंभीरता नहीं दिखाई गई है। वर्ष 2001–02 में इस योजना के अंतर्गत केंद्र सरकार द्वारा उसको जो भी धनराशि जारी की गई वह खर्च ही नहीं की गई, इतना ही नहीं केंद्र सरकार द्वारा प्रदत्त यह धनराशि उसने क्रियान्वयन समिति को हस्तांतरित करने में ही एक वर्ष का समय लगा दिया। आंध्र प्रदेश, झारखंड और पश्चिम बंगाल द्वारा भी जारी धनराशि का समय सदुपयोग करने में काफी कोताही बरती गई है, इससे साफ तौर पर स्पष्ट हो जाता है कि सर्वशिक्षा अभियान जैसी नितांत अपरिहार्य और जनोपयोगी महत्वपूर्ण योजना के समुचित और प्रभावी रूप से क्रियान्वयन में अधिकांश राज्यों और विशेषरूप से उत्तर भारत के राज्यों द्वारा रुचि नहीं दिखाई गई और इसलिए वहां इस योजना का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है, जबकि 93वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्वारा 6–14 आयु वर्ग के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा उनका मौलिक अधिकार बना दिया गया है, तो सभी राज्य सरकारों को अपने यहां सभी बच्चों को शिक्षा प्रदान करने के संवैधानिक दायित्व के निर्वहन हेतु सर्वशिक्षा अभियान के क्रियान्वयन में विशेष रुचि लेनी चाहिए।

उपयोगी सुझाव

सर्वशिक्षा अभियान के क्रियान्वयन की अभी तक की प्रगति पर नजर डालने पर ऐसा प्रतीत होता है कि इस महत्वाकांक्षी अभियान के क्रियान्वित होने पर भी प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण का चिर प्रतीक्षित लक्ष्य एक बार भी निर्धारित समय–सीमा अर्थात् वर्ष 2010 तक पूरा किया जाना संभव नहीं हो पाएगा। पूर्व के भी सभी शिक्षा से संबंधित कार्यक्रम अथवा अन्य विकास की योजनाएं और कार्यक्रम क्रियान्वित हुए हैं या हो रहे हैं उनके अनुभव हमें इस महत्वपूर्ण अभियान की सफलता सुनिश्चित करने हेतु कुछ अतिरिक्त प्रयास करने और कुछ विशेष व्यवस्थाएं निर्धारित करने के लिए प्रयत्नशील होने के लिए कह रहे हैं। अतः इस बारे में निम्नलिखित सुझावों पर विचार किया जाना समीचीन लगता है–

- सर्वशिक्षा अभियान की सफलता सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक है कि जिस उत्साह और भावना के साथ इस अभियान के प्रारंभ करने की सरकार द्वारा घोषणाएं की जाती रही हैं, इसे पूरा होने तक उसे उसी रूप में बनाए रखा जाए। इसके लिए इस अभियान के प्रति राजनीतिक प्रतिबद्धता पूरी तरह बनाए रखना बहुत जरूरी है, यदि राजनीतिक प्रतिबद्धता को बनाए रखा जा सका, तो इस अभियान की सफलता की बहुत अच्छी आशाएं की जा सकती हैं।
- अभियान की सफलता सुनिश्चित करने हेतु दूसरे स्तर पर प्रशासनिक प्रतिबद्धता होना भी आवश्यक है। प्रशासनिक प्रतिबद्धता बनाए रखने के लिए प्रशासनिक अधिकारियों का इस अभियान के प्रति भावनात्मक लगाव पैदा करने के लिए प्रयत्न किए जाने चाहिए, क्योंकि इसके बिना सफलता मिलना संदेहास्पद ही रहेगा।
- हर हालत में देश के प्रत्येक गांव में प्राथमिक विद्यालय की उपलब्धता और उसमें पर्याप्त आवश्यक संसाधन उपलब्ध करना सुनिश्चित किया जाना चाहिए। हांलाकि हर गांव में विद्यालय खोलने हेतु 'शिक्षा गारंटी स्कीम वर्ष' वर्ष 1999 से केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित योजना के तौर पर संचालित की गई है, लेकिन अतिशीघ्र सभी गांवों में पर्याप्त संसाधनों युक्त विद्यालय खोलने हेतु इस तरह के कार्यक्रमों में तेजी लाना जरूरी है, अन्यथा सभी बच्चों का दूर–दूर स्थिति विद्यालयों में जाकर शिक्षा प्राप्त करना संभव नहीं हो पाएगा और इस प्रकार सर्वशिक्षा अभियान का सफल होना संभव नहीं हो सकेगा।
- सरकार द्वारा प्राथमिक शिक्षा को कानूनी रूप से अनिवार्य घोषित करने हेतु 93वां संविधान संशोधन पास अवश्य हो गया है, लेकिन इसमें ऐसी व्यवस्था भी निर्धारित की जानी चाहिए जिसमें निर्धारित आयु वर्ग के बच्चों को स्कूल भेजने की जिम्मेदारी अभिभावकों की रहे तथा अनुपालन न करने पर कठोर कार्यवाही किए जाने का प्रावधान किया जाए, अन्यथा किसी न किसी निहित कारण से सभी बच्चे स्कूल नहीं जा पाएंगे और सर्वशिक्षा अभियान की सफलता प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकेगी।
- हमेशा से यह बात सामने रही है कि विद्यालयों में शिक्षकों की भंयकर कमी है, उसे शीघ्र दूर करने की घोषणाएं भी की जाती रही हैं, लेकिन यथार्थ यह है कि यह कमी पूरी करना भी संभव नहीं हो पाया। अतः इस ओर ध्यान दिया जाना चाहिए, इसके अतिरिक्त शिक्षकों से इस अभियान से भरपूर सहयोग लेने के लिए पर्याप्त अभिप्रेरणा के साथ–साथ कठोरता पूर्वक दायित्वों के निर्वहन के लिए आवश्यक व्यवस्थाएं भी निर्धारित की जानी चाहिए।
- आमतौर पर योजनाओं के क्रियान्वयन को वित्तीय संसाधनों की अपर्याप्तता और ससमय उनका प्रवाह काफी हद तक प्रभावित करता है। यह अभियान एक 10 वर्षीय लंबी अवधि की योजना है। अतः इस प्रमुख अभियान की सफलता हेतु आवश्यक वित्तीय संसाधनों का नियंत्रित और ससमय प्रवाह सुनिश्चित किया जाना चाहिए, जिससे किसी भी स्तर पर आवश्यक वित्तीय संसाधनों की कमी अनुभव किए जाने के कारण आवश्यक व्यवस्थाओं पर दुष्प्रभाव न पड़े।
- अभियान की सफलता हेतु आवश्यक है कि प्रत्येक स्तर पर अनुश्रवण की नियमित व्यावहारिक और प्रभावी व्यवस्था सुनिश्चित की जाए और उसका कठोरता से पालन कराया जाए। इसके अतिरिक्त सभी स्तरों पर संबंधित प्रत्येक कर्मी की जवाबदेही सुनिश्चित किया जाना भी अत्यंत आवश्यक है।
- प्राथमिक शिक्षा को व्यावहारिक, रोचक, श्रेयस्कर और उपयोगी बनाने हेतु अतिशीघ्र आवश्यक कदम उठाए जाएं, अर्थात् रोचक व्यावहारिक और उपयोगी पाठ्यक्रम का निर्धारण, रुचिपूर्ण पुस्तकें और पाठ्य विधियों का प्रयोग करने के लिए प्रयास किए जाएं ताकि इसकी ग्राह्यता में अभिवृद्धि हो सके। उल्लेखनीय है कि विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा अभी तक इस अभियान के अंतर्गत उठाए गए कदमों को केंद्रीय मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा समुचित नहीं माना गया है।
- वित्तीय संसाधनों की कमी को दृष्टिगत रखते हुए यह भी आवश्यक नहीं है कि प्राथमिक शिक्षा को पूरी तरक निःशुल्क रखा जाए, ऐसे लोग जो इसका खर्च वहन करने में सक्षम हैं, उनके लिए सशुल्क लेकिन समुचित गुणवत्तायुक्त प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराई जाए, गरीब और साधन विहीन लोगों के लिए इसे निःशुल्क रखने के साथ उन्हें स्टेशनरी, यूनीफार्म तथा छात्रवृत्ति आदि की भी व्यवस्था कर देनी चाहिए ताकि उसके बच्चों के साथ–साथ उनके अभिभावकों को भी शिक्षा के प्रति पर्याप्त लगाव विकसित हो सके।
- अभियान की सफलता हेतु हर स्तर से इसका समुचित प्रचार–प्रसार भी किया जाना अत्यंत आवश्यक है। इस अभियान के नियोजन और कार्यान्वयन के प्रत्येक स्तर पर और प्रत्येक चरण में चुनी हुई त्रिस्तरीय पंचायतों, स्वयंसेवी संस्थाओं, नागरिक संगठनों आदि की सहभागिता को प्राप्त करने के लिए समुचित व्यवस्था की जाए, तो केवल कागजों और फाइलों में लिखी–हुई एक औपचारिकता मात्र न रहे बल्कि व्यवहार में उसकी परिणति होनी चाहिए।

उपर्युक्त सुझावों पर अमल किए जाने से निश्चित रूप से सर्वशिक्षा अभियान की सफलता के लिए मार्ग प्रशस्त हो सकेगा, इस संबंध में यह भी विचारणीय है कि इन सभी सुझावों पर एक साथ और एक समय में अमल किया जाना व्यावहारिक दृष्टि से संभव भले ही न हो, लेकिन एक सुनियोजित, सुविचारित और सुनिश्चित योजना के अंतर्गत अमल में जाए जाने वाले बिंदुओं और कदमों हेतु एक व्यावहारिक कार्य योजना तैयार कर उसे पूरी निष्ठा, तत्परता और प्रतिबद्धता के साथ लागू करने पर विचार किया जा सकता है। ❑

(लेखक राजस्थान हाईकोर्ट में अधिवक्ता हैं)

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, लेवल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

नवीन शिक्षा नीति और प्राथमिक शिक्षा

अभिनय कुमार शर्मा

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को 1992 में अद्यतन किया गया था। रूपांतरित नीति शिक्षा के क्षेत्र में समानता लाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा व्यवस्था की कल्पना करती है। इसमें सभी को शिक्षा उपलब्ध कराने, प्राथमिक शिक्षा में अवधारणा और गुणवत्ता बनाए रखने, लड़कियों की शिक्षा, प्रत्येक जिले में अनुकरणीय नवोदय-विद्यालयों की स्थापना, माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण, ज्ञान का समन्वय और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न विषयों पर अनुसंधान, राज्यों में अधिक विश्वविद्यालयों की स्थापना, शारीरिक शिक्षा, खेलों और योग को बढ़ावा दिया गया है।

भारत में शिक्षा का महत्व हमेशा से रहा है और इसे सर्वोच्च धन स्वीकार किया गया है। ऐसा इसलिए क्योंकि न तो कोई चोर इसे चुरा सकता है, न कोई राजा इसे हर सकता है साथ ही बांटने पर यह बढ़ती है। भले ही भारत में विदेशी आक्रांताओं के आने से इसकी विकास–गति कम हुई हो परंतु पहले भी भारत के घर–घर में प्राथमिक शिक्षा तो प्रत्येक व्यक्ति को प्रदान की ही जाती थी। परंतु लंबे काल तक गुलामी के वश में रहने के कारण इस प्राथमिक शिक्षा का व्यक्ति–दर–व्यक्ति विस्तार नहीं हो पाया और सन 1947 तक इस पक्ष पर गहरा नकारात्मक प्रभाव पड़ा। स्वतंत्रता के पश्चात ये विचार किया गया कि प्राथमिक शिक्षा देश की समस्त शैक्षिक संरचना की नींव है और यदि नींव ही कमजोर होगी तो उस पर खड़ा शिक्षा–रूपी भवन दीर्घायु प्राप्त नहीं कर सकता। यही कारण रहा कि संविधान ने इस संबंध में राज्यों को सख्त निर्देश दिए हैं। केंद्र सरकार ने अपनी जागरूकता के चलते 1976 के संविधान–संशोधन के तहत इसे समवर्ती सूची के अंतर्गत कर लिया। लेकिन इसकी ठोस वित्तीय और प्रशासनिक जरूरतों के कारण केंद्र और राज्य सरकारों के बीच जिम्मेदारियों का बंटवारा आवश्यक हो गया है।

यह नीति प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अधिक निवेश करने पर जोर देती है। यह प्रस्ताव भी किया गया है कि सभी संबंधित व्यक्तियों का समर्थन प्राप्त करने के लिए "भारत शिक्षा कोश" के नाम से एक निधि बनाई जाए ताकि अतिरिक्त बजटीय समर्थन जुटाया जा सके।

यदि शिक्षा पर किए गए व्ययों का समग्र विश्लेषण किया जाए तो शिक्षा के लिए संसाधन बढ़ाने की बचनबद्धता के अनुरूप शिक्षा के आवंटन में पिछले वर्षों के दौरान वृद्धि की गई है। शिक्षा के लिए योजना खर्च जो प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान 151 करोड़ रुपये था, दसवीं योजना (2002–07) के दौरान बढ़ाकर 43,825 करोड़ रुपये कर दिया गया है। सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के संदर्भ में भी शिक्षा के व्यय में वृद्धि हुई है। यह 1951–52 के 0.62 प्रतिशत से बढ़कर 2002–03 में 3.98 (बजट अनुमान) हो गया है। दसवीं योजना में जो 43,825 करोड़ रुपये शिक्षा पर खर्च किए जाने हैं, उनमें से प्राथमिक शिक्षा के लिए 30,000 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है।

उपर्युक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि उत्तरोत्तर प्राथमिक शिक्षा के ऊपर व्यय लगभग बढ़ता ही चला गया। इन व्ययों के अंतर्गत कुछ कार्यक्रम भारत सरकार द्वारा चलाए गए हैं। साथ ही, प्राथमिक शिक्षा को मूलभूत अधिकार

प्राथमिक शिक्षा क्षेत्र पर अब तक किया गया योजना–व्यय

पहली योजना खर्च (1951–56)	58 प्रतिशत
दूसरी योजना खर्च (1956–61)	35 प्रतिशत
तीसरी योजना खर्च (1966–69)	34 प्रतिशत
योजना अवकाश	24 प्रतिशत
चौथी योजना खर्च (1969–74)	50 प्रतिशत
पांचवीं योजना खर्च (1974–79)	52 प्रतिशत
छठी योजना खर्च (1980–85)	32 प्रतिशत
सातवीं योजना खर्च (1985–90)	37 प्रतिशत
खर्च–1990–92	37 प्रतिशत
आठवीं योजना खर्च (1992–97)	48 प्रतिशत
नौवीं योजना परिव्यय (1997–02) केंद्रीय क्षेत्र	66 प्रतिशत
नौंवी योजना खर्च (1997–02)	65.7 प्रतिशत
दसवीं योजना परिव्यय (2002–07) केंद्रीय क्षेत्र	65.6 प्रतिशत

बनाने के लिए संसद ने संविधान (86वां संशोधन) अधिनियम 2002 पारित किया गया। इस अधिनियम को लागू करने के लिए एक ब्योरेवार व्यवस्था वाला एक अनुवर्ती कानून लाने का भी प्रस्ताव है। जो कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है –

सर्वशिक्षा अभियान

अक्तूबर 1998 में संपन्न हुऐ राज्यों के शिक्षा मंत्रियों के सम्मेलन की सिफारिशों के आधार पर "सर्वशिक्षा अभियान" योजना विकसित की गई, जिसमें सभी को प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया। इसे नवंबर 2002 में मंजूर किया गया। इस कार्यक्रम में पूरा देश आता है और इससे 11 लाख बसावटों के 19.2 करोड़ बच्चे लाभान्वित हो रहे हैं। वर्तमान में 8.5 लाख, प्राथमिक तथा उच्च प्राथमिक स्कूल और 33 लाख शिक्षक भी इस कार्यक्रम के दायरे में आते हैं। सर्वशिक्षा अभियान में कमजोर वर्गों की बालिकाओं और बच्चों पर विशेष ध्यान दिया गया है। सर्वशिक्षा अभियान के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में भी कम्प्यूटर शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान किया गया है। जिससे डिजिटल डिवाइड को कम करने में सहायता मिलेगी।

प्राथमिक शिक्षा के लिए पौष्टिक आहार सहायता का राष्ट्रीय कार्यक्रम

प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए पौष्टिक आहार प्रदान करने का राष्ट्रीय कार्यक्रम 15 अगस्त 1995 को प्रारंभ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य स्कूलों में बच्चों का दाखिला एवं उनकी उपस्थिति सुधारना और उन्हें रोज स्कूल आने के लिए प्रोत्साहित करना है। 2002–03 के दौरान राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों के आधार पर 31 मार्च 2003 तक 10.36 करोड़ बच्चों के लिए 28.37 लाख मीट्रिक टन अनाज (76.22 प्रतिशत) उठा लिया गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी हाल ही में उन सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों को बच्चों को पके–पकाए भोजन का वितरण समयबद्ध तरीके से आरंभ करने के निर्देश दिए हैं, जिन्होंने अभी तक यह योजना अपने यहां आरंभ नहीं की है।

भारत में प्रारंभिक शिक्षा

दाखिलों में बढ़ोतरी (लाख में)

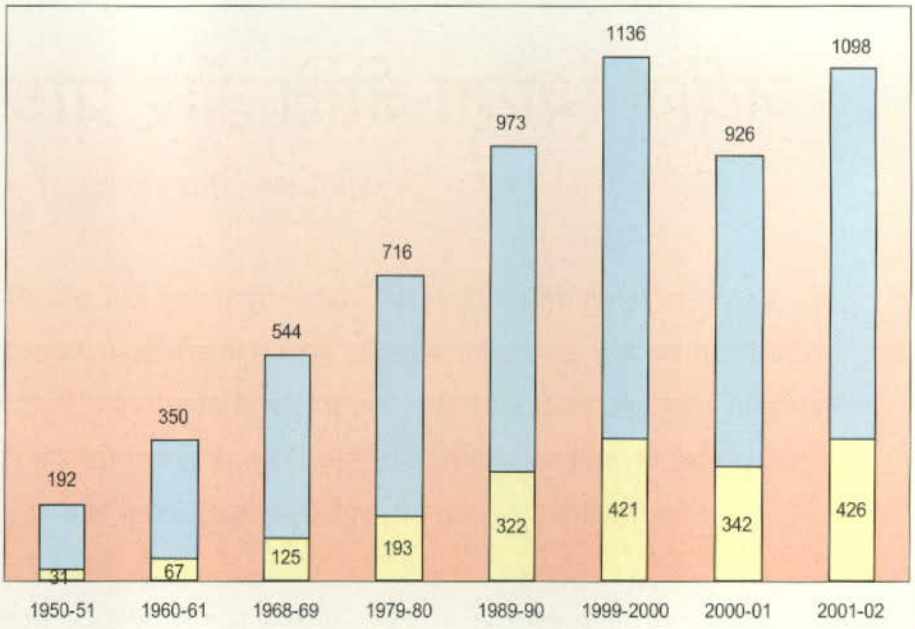

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम

केंद्र द्वारा प्रायोजित इस योजना का उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा प्रणाली में नए प्राण फूंकना और सर्वसुलभ प्राथमिक शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करना है। यह कार्यक्रम "अतिरिक्तता" के सिद्धांत पर आधारित है और कार्यक्रम क्रियान्वयन की इकाई जिला मानी जाती है। इस कार्यक्रम में स्कूलों में अध्यापकों की नियुक्ति, शिशु शिक्षा केंद्र खोलने, राज्य शैक्षिक प्रशिक्षण संस्थानों को सुदृढ़ करने, अध्यापक प्रशिक्षण केंद्र बनाने, विकलांग बच्चों के लिए सहायता एवं अनुसूचित जाति एवं जनजाति के बच्चों के लिए विशेष प्रयास शामिल हैं। ये कार्यक्रम 1994 में सात राज्यों के 42 जिलों में प्रारंभ किया गया था, जो अब बढ़कर 18 राज्यों के 272 जिलों में फैल चुका है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के पश्चात से भारत सरकार ने प्राथमिक शिक्षा को आधारभूत आवश्यकता मानकर इस दिशा में कदम उठाए हैं। परंतु इन के साथ एक नकारात्मक तथ्य यह भी जुड़ा है कि इनकी गति धीमी रही है और इन्हें तृणमूल स्तर तक पहुंचाने के लिए एक सुदृढ़ राजनीतिक एवं प्रशासनिक इच्छा की कमी है। यही कारण है कि भारत आज भी कई छोटे दक्षिणी अमरीकी, अफ्रीकी एवं एशियाई देशों से शैक्षिक प्रतिशत में पीछे है और 1947–2004 तक के लंबे अंतराल में मात्र 65.38 प्रतिशत साक्षरता हासिल कर पाया है। यह सौभाग्य की बात है कि वर्तमान शासन का दौर इस क्षेत्र में, क्रांतिकारी सोच रखता है और हमारे राष्ट्रपतिजी का भी मानना है कि देश के इतने बड़े मानव संसाधन की क्षमता का कारगर तरीके से उपयोग करने के लिए शिक्षा विशेष तौर पर बुनियादी शिक्षा पर जोर दिया जाएगा एवं इसके वित्त पोषण हेतु सभी केंद्रीय करों पर उप–कर लगाया जाएगा। ऐसे में ही भारत सामाजिक रूप से मजबूत हो सकेगा एवं विश्व–पटल पर सुदृढ़ होकर सामने आ सकेगा। ये ही प्रत्येक भारतीय नागरिक की कामना है! ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

भारत में उच्च शिक्षा पर व्यय : एक दृष्टि

डा. विजय सिंह राघव

सरकार द्वारा किया जाने वाला व्यय उन व्ययों का सूचक है जो प्रशासन के द्वारा अपने देश के नागरिकों की भलाई/कल्याण के लिए किया जाता है। लोक कल्याणकारी राज्य में देश के नागरिक यह अपेक्षा करते हैं कि अन्य क्षेत्रों की भांति सरकार शिक्षा पर भी व्यय करे। यही वजह है कि शिक्षा पर व्यय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से निरंतर बढ़ता जा रहा है।

सरकार द्वारा किया जाने वाला व्यय उन व्ययों का सूचक है जो प्रशासन के द्वारा अपने देश के नागरिकों की भलाई/कल्याण के लिए किया जाता है। लोक कल्याणकारी राज्य में देश के नागरिक यह अपेक्षा करते हैं कि अन्य क्षेत्रों की भांति सरकार शिक्षा पर भी व्यय करे। यही वजह है कि शिक्षा पर यह व्यय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से निरंतर बढ़ता है। पहली योजना में यह व्यय लगभग 123 गुणा बढ़कर 20,381 करोड़ रुपये हो गया। जहां यह उच्च शिक्षा में 14 करोड़ रुपये था या कुल शिक्षा व्यय का 9 प्रतिशत था जो नौंवी योजना में लगभग 178 गुणा बढ़कर 25,000 करोड़ रुपये हो गया। लेकिन कुल शिक्षा व्यय के प्रतिशत के

रूप में उच्च शिक्षा पर व्यय की प्रगति को देखें तो पाते हैं कि सरकार का उच्च शिक्षा पर योजनागत निवेश कुछ कारणोंवश छठी पंचवर्षीय योजना से पूर्व (पहली से पांचवी पंचवर्षीय योजना तक) यह बढ़ता हुआ था। पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी, पांचवी, छठी, सातवीं, आठवीं और नौवीं पंचवर्षीय योजनाओं में उच्च शिक्षा पर कुल शिक्षा व्यय का क्रमश 9, 18, 15, 25, 22, 22, 16, 8 तथा 12 प्रतिशत भाग ही व्यय किया गया। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में उच्च शिक्षा पर होने वाले व्यय की तुलनात्मक स्थिति तालिका–1 से स्पष्ट हो जाती है।

उच्च शिक्षा पर काफी कम खर्च किया जा रहा है। एक अनुमान के अनुसार "इस पर सकल घरेलू उत्पाद का महज 0.8 प्रतिशत ही खर्च हो रहा है।" जहां तक अनुसंधान और विकास पर खर्च की बात है तो यह "सकल घरेलू उत्पाद का मात्र 0.6 प्रतिशत ही है जबकि यह 2 प्रतिशत तक होना चाहिए। पिछले कुछ वर्षों से सरकार का विशेष प्रयास प्राथमिक शिक्षा पर केंद्रित हो जाने के कारण उच्च शिक्षा के लिए आवश्यक संसाधनों की भारी कमी परिलक्षित होती रही है। उच्च शिक्षा के भावी खर्च के संदर्भ में कुछ अध्ययनों पर एक दृष्टि डालें तो बिरला अंबानी रिपोर्ट–2002 यह बताती है कि 2015 में उच्च शिक्षा के इच्छुक विद्यार्थियों की संख्या 2.2 करोड़ होगी और उन्हें उच्च शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु अनुमानतः 41,939 करोड़ रुपये खर्च करने होंगे। वर्तमान खर्च की प्रवृत्ति को देखते हुए कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा पर इतने अधिक खर्च की आपूर्ति सार्वजनिक निवेश से करना आसान नहीं होगी। निजी निवेश पर ध्यान सकेंद्रित करके ही इतने अधिक खर्च की आपूति की जा सकती है। इसीलिए बिरला अंबानी रिपोर्ट–2002 यह भी बताती है कि 41,939 करोड़ रुपये के लक्ष्य की आपूर्ति के लिए 16,776 करोड़ रुपये (अर्थात कुल खर्च का 40 प्रतिशत खर्च) सार्वजनिक निवेश से जुटाने होंगे तथा शेष 25,163 करोड़ रुपये (अर्थात कुल खर्च का 60 प्रतिशत खर्च) की व्यवस्था निजी निवेश से करनी होगी।

आज के भूमंडलीकरण के युग में उच्च शिक्षा में निजी निवेश बढ़ाना कोई बुरी बात नहीं है। निजी महाविद्यालयों से भी अच्छी प्रतिभाएं निकलती हैं। समस्या यह है कि निजी महाविद्यालय महंगे होते हैं लेकिन वास्तविकता यह भी है कि शिक्षा जितनी महंगी होगी उतनी ही जबावदेही भी बढ़ेगी और शिक्षण संस्थान गुणवत्ता पर ध्यान देंगे। कम्प्यूटर शिक्षा को ही लें तो बेहतर कम्प्यूटर शिक्षा के लिए विद्यार्थी हजारों रुपये खर्च करके बेहतर स्थानों पर जाते हैं जिससे वे जल्दी सीख भी लेते हैं और उन्हें गुणवत्ता वाली शिक्षा भी मिल जाती है। इसका कारण यह है कि अपने द्वारा खर्च किए गए पैसे का उन पर दबाव रहता है। दूसरे प्रतियोगिता में सफल होने के लिए निजी संस्थान गुणवत्ता पर ध्यान देते हैं। दुनियाभर में जितने बड़े शैक्षिक संस्थान हैं, काफी महंगे हैं। इन सभी में शिक्षा बहुत महंगी है लेकिन अगर यह शिक्षण संस्थान महंगे हैं तो वहां का स्तर भी बहुत अच्छा है और अच्छी शिक्षा की चाह रखने वाले विद्यार्थी वहां पहुंचते हैं। वे बेहतर प्रतिभाओं को निकाल रहे हैं। बेहतर शिक्षा मिलनी चाहिए, भले ही वह महंगी हो या फिर वह चाहे सार्वजनिक संस्थानों से मिले या निजी संस्थानों से मिले। यहां पर यह भी देखना होगा कि शिक्षा व्यापार का रूप धारण न कर ले। वह महंगी हो तो मात्र बेहतर सुविधाओं के लिए हो। कोई भी सरकार चाहे कितनी भी कल्याणकारी हो हमेशा उच्च शिक्षा

तालिका–1

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में उच्च शिक्षा पर व्यय

(करोड़ रुपये में)

पंचवर्षीय योजना	शिक्षा पर कुल व्यय	उच्च शिक्षा पर कुल व्यय	प्राथमिक शिक्षा पर कुल व्यय	माध्यमिक शिक्षा पर कुल व्यय	प्रौढ़ शिक्षा पर कुल व्यय	तकनीकी शिक्षा पर कुल व्यय	अन्य क्षेत्र पर व्यय
पहली योजना	153	14	85	20	–	20	14
(1951–1956)	(100)	(9)	(56)	(13)		(13)	(9)
दूसरी योजना	273	48	95	51	–	49	30
(1956–1961)	(100)	(18)	(35)	(19)		(18)	(10)
तीसरी योजना	589	87	201	103	–	125	73
(1961–1966)	(100)	(15)	(34)	(18)		(21)	(12)
चौथी योजना	786	195	239	140	–	106	106
(1969–1974)	(100)	(25)	(30)	(18)		(13)	(14)
पांचवीं योजना	912	205	317	156	–	107	127
(1974–1979)	(100)	(22)	(35)	(17)		(12)	(14)
छठी योजना	2530	559	836	530	224	273	108
(1980–1985)	(100)	(22)	(33)	(21)	(9)	(11)	(4)
सातवीं योजना	7633	1201	2849	1832	470	1083	198
(1985–1990)	(100)	(16)	(37)	(24)	(6)	(14)	(3)
आठवीं योजना	9600	1516	9201	3498	1848	2786	751
(1992–1997)	(100)	(8)	(47)	(18)	(9)	(14)	(4)
नौवीं योजना	20381*	2500	11843*	2603	630	2374	431
(1997–2000)	(100)	(12)	(58)	(13)	(3)	(12)	(2)

* इसमें योजना के अंतिम तीन वर्षों के दौरान शिक्षा के लिए पोषाहार (दोपहर का भोजन) सहायता के वास्ते 4526.74 करोड़ की राशि शामिल नहीं है।

नोटः– ( ) कोष्ठक की राशियां प्रतिशत को व्यक्त करती हैं।

स्रोतः– डा. आर.वी.वी. वैद्यनाथ अइयर, "भारत में शैक्षिक, नियोजन और प्रशासन : अतीत और भविष्य" जनरल ऑफ एजुकेशनल प्लानिंग एंड एडमिनिस्ट्रेशन, खंड–7, अंक–2 राष्ट्रीय शैक्षिक नियोजन और प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली, उद्धत 2002 पृ. 84

पर बहुत अधिक खर्च नहीं कर सकती क्योंकि उसे अन्य विकासात्मक कार्य भी करने होते हैं। इस दृष्टि से भी हम निजी महाविद्यालयों को बुरा नहीं कह सकते। जब विद्यालयों को इन निजी महाविद्यालयों में ठीक से पैसा खर्च करना पड़ेगा तो उच्च शिक्षा में गंभीरता आएगी और गुणवत्ता निखरेगी। वैसे भी भारत के बहुत से लोग अपने बच्चों को बेहतर उच्च शिक्षा देना चाहते हैं भले ही वह महंगी हो। मिसाल के तौर पर अमरीका में विदेशी छात्रों की स्कूल फीस में वृद्धि होने के बावजूद भारतीय छात्र बड़ी तादाद में दाखिला ले रहे हैं। इसके दो कारण हो सकते हैं एक तो यह कि भारतीय अपने परिवार की समृद्धि और समाज हित के लिए उच्च शिक्षा पर विशेष ध्यान देते हैं और ज्यादा खर्च करने से भी गुरेज नहीं करते, दूसरे, वर्तमान में प्रतिस्पर्धा का माहौल है, उच्च शिक्षा विदेशों में हासिल कर ज्यादा वेतन वाली नौकरियां पाने के लिए भारतीयों में होड़ लगी है।

वर्तमान में खुशी की बात यह है कि इस दिशा में हमारे कदम अभी से निरंतर तेजी से बढ़ने शुरु हो गए हैं। यहां पर हमें यह बात भी नहीं भूलनी चाहिए कि उच्च शिक्षा में निजी निवेश का विस्तार यदि योजनाबद्ध ढंग से न किया जाए, उस पर प्रभावी नियंत्रण न रखा जाए, निजी महाविद्यालय अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों को न समझें तो उच्च शिक्षा सही दिशा में जाने की अपेक्षा गलत दिशा में भी जा सकती है। निजी महाविद्यालय अपने निवेश के बदले अधिक धन की प्राप्ति, व्यापार, मुनाफे की भावना से संचालित हो सकते हैं। वे डोनेशन के नए–नए तरीके ईजाद कर सकते हैं, ट्यूशन की प्रवृत्ति का बढ़ावा दे सकते हैं। निजी संस्थान उद्योग का रूप धारण कर सकते हैं जिसके कारण कम निवेश अधिक लाभ की भावना पनप सकती है। इससे विद्यार्थियों पर उच्च शिक्षा का बोझ बढ़ सकता है। इस बोझ के बढ़ने से अभिजात्य वर्ग को अघोषित आरक्षण मिल सकता है। उच्च शिक्षा गरीब छात्रों की पहुंच से दूर हो सकती है। सभी यह भी जानते हैं कि बेलगाम नियंत्रण शोषण को बढ़ावा देता है। यदि यह शोषण अपनी सीमा लांघ जाए तो इससे काले धन को बढ़ावा मिल सकता है। सामान्यतः निजीकरण अच्छा है लेकिन यदि उक्त बुराइयां पैदा होती हैं तो निजीकरण खराब कहा जाएगा। वर्तमान में चल रहे निजी महाविद्यालयों के बारे में यह भी सत्य है कि यद्यपि कुछ निजी महाविद्यालयों में उक्त बुराइयां दृष्टिगोचर नहीं होतीं, वहीं कुछ में इन बुराइयों के दर्शन किए जा सकते हैं। वर्तमान में निजी महाविद्यालयों के फैलते कलेवर में जहां एक ओर गुणवत्ता वाले केंद्र खड़े हुए हैं, वहीं संदिग्ध कार्यकलापों वाले संस्थानों की भी कमी नहीं। यह महाविद्यालय न्यूनतम अर्हता और भर्ती के बारे में विश्वविद्यालयों के नियमों, कानूनों, कक्षा की न्यूनतम संख्या तथा प्रयोगशाला कार्य आदि के बारे में निर्धारित मानकों का उल्लंघन करते देखे जा सकते हैं।

वर्तमान में सरकार निजी महाविद्यालयों पर प्रभावी नियंत्रण लगा रही है ताकि बुराइयां पनपने न पावें। उनकी फीस पर नियंत्रण रखा जा रहा है, उनकी गुणवत्ता बढ़ाने पर ध्यान दिया जा रहा है, निर्धारित मानकों का पालन कराने की कोशिश की जा रही है, प्रतिभावान तथा गरीब विद्यार्थियों के समक्ष उच्च शिक्षा ग्रहण करने में धन की कमी आड़े न आए इस हेतु विद्यार्थियों को ऋण सुलभ कराया जा रहा है। इसके लिए स्वदेश में 7.50 लाख रुपये तक तथा विदेशों में 15 लाख रुपये तक सस्ती दरों पर शिक्षा ऋण की व्यवस्था की गई है। इन ऋणों को कोर्स पूरा होने के 12 महीने अथवा नौकरी मिलने के 6 महीने के पश्चात, इनमें से जो भी पहले हो, से शुरू कर 5 से 7 वर्षों के दौरान चुकाना होता है। वैसे उच्च शिक्षा हेतु दिए जाने वाले इन ऋणों की ब्याज दरों में तथा चुकाए जाने वाली शर्तों में विभिन्न बैंकों में थोड़ा बहुत अंतर देखने को मिल जाता है।

परंपरागत शिक्षा तथा दूरस्थ शिक्षा की तुलनात्मक स्थिति

परंपरागत शिक्षा प्रणाली दूरस्थ शिक्षा प्रणाली से अपेक्षाकृत महंगी है इसलिए सीमित वित्तीय संसाधनों की दृष्टि से इस ओर भी ध्यान सकेंद्रित करना चाहिए। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में 72.61 प्रतिशत आय का स्रोत फीस ही होती है जबकि उच्च शिक्षा की परंपरागत प्रणाली में फीस से मात्र 13.80 प्रतिशत की आय ही होती है। दूरस्थ शिक्षा में दूर शिक्षा संस्थान मात्र 18.25 प्रतिशत आय के लिए ही सरकार/विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पर आश्रित होते हैं, जबकि परंपरागत शिक्षा के संस्थान 72.38 प्रतिशत आय के लिए सरकार/विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पर आश्रित होते हैं। परंपरागत शिक्षा का 50 प्रतिशत से भी अधिक सावधि खर्च टीचिंग स्टाफ और गैर–टीचिंग स्टाफ के वेतन और भत्तों पर ही हो जाता है। अन्य कामों के लिए आय का बहुत कम भाग शेष बचता है।

प्रति विद्यार्थी लागत की दृष्टि से देखें तो भी दूर शिक्षा से परंपरागत उच्च शिक्षा अपेक्षाकृत महंगी है। परंपरागत शिक्षा के प्रति विद्यार्थी औसत लागत दूर शिक्षा की प्रति विद्यार्थी की औसत लागत की लगभग 6 गुनी है।

उच्च शिक्षा के सीमित संसाधनों और परंपरागत शिक्षा के महंगेपन को देखते हुए आज परंपरागत उच्च शिक्षा का प्रचार–प्रसार एक बहुत बड़ी समस्या बन गई है। भारत एक विकासशील राष्ट्र है। अन्य उत्पादक व्ययों पर बहुत बड़ी कटौती करके वह संसाधनों को परंपरागत उच्च शिक्षा की ओर बहुत अधिक नहीं मोड़ सकता है और यदि मोड़ता है तो यह अंतर्राष्ट्रीय विकास की दौड़ में शामिल हो सकेगा और दूसरे विद्यार्थियों पर तो इसका बोझ अपेक्षाकृत ऊंचा रहता ही है। इसके ऊंचे बोझ को सभी विद्यार्थी नहीं उठा सकते। भारत में ऐसे परिवारों की संख्या कुछ कम नहीं जो निम्न आय वर्ग की श्रेणी में आते हैं। ऐसे परिवारों को बुनियादी सुविधाएं ही सुलभ नहीं हैं यदि उनके परिवारों के बच्चे बुनियादी शिक्षा हासिल कर भी लें लेकिन परंपरागत उच्च शिक्षा तक उनकी पहुंच आसान नहीं है।

जनगणना 2001 के समंक बताते हैं कि भारत में कुल 19.2 करोड़ परिवार हैं, इनमें से लगभग 40 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो एक कमरे वाले मकान में रहते हैं, लगभग 52 प्रतिशत परिवार ऐसे मकानों में रहते हैं जिनकी दीवारें और छत पक्की हैं। लगभग 56 प्रतिशत परिवारों में ही बिजली है, लगभग 38 प्रतिशत परिवारों को ही घरों में पानी सुलभ है, 64 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जिनमें अलग रसोईघर की व्यवस्था है, मात्र 18 प्रतिशत घरों में

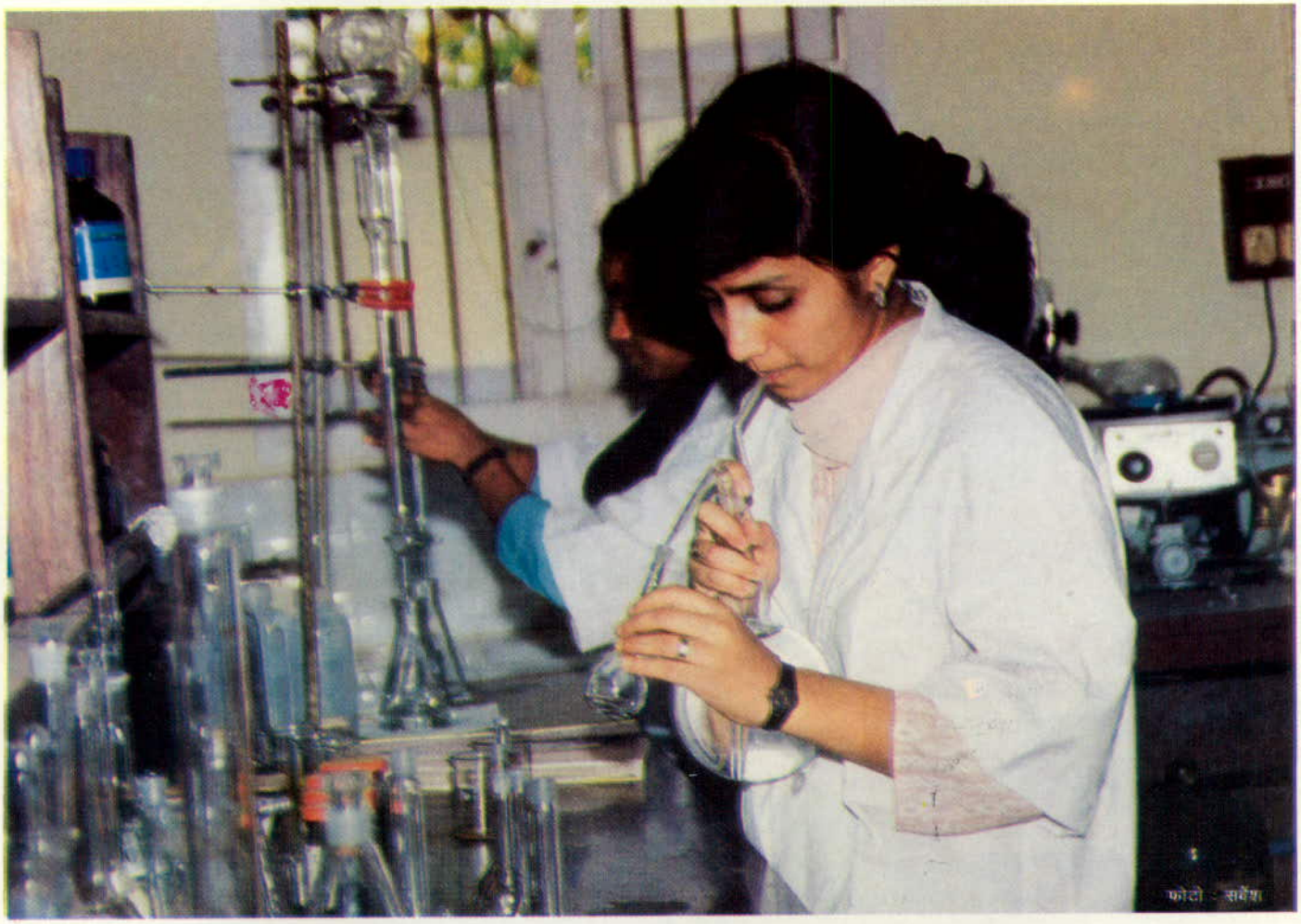

रसोई गैस का उपयोग किया जाता है और 35 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जिनका बैंक खाता है।

इन परिस्थितियों में भौतिक प्रगति में लग रहे वित्तीय साधनों में बिना किसी कटौती के एक ऐसी पद्धति लागू करना और उसका विस्तार करना वर्तमान समय की मांग है जो विकास के कार्यक्रम को क्षतिग्रस्त न करे, विद्यार्थियों पर अतिरिक्त बोझ न डाले और जो लचीली भी हो। इस दृष्टि से सर्वसुलभ, सस्ता एवं प्रभावी माध्यम दूरस्थ शिक्षा ही जान पड़ता है। इस तरह के नियोजन से वित्तीय साधनों की कमी उच्च शिक्षा के विस्तार में बहुत अधिक आड़े नहीं आएगी और उच्च शिक्षा के इच्छुक सभी लोगों को उच्च शिक्षा भी सुलभ हो जाएगी, साथ ही परंपरागत उच्च शिक्षा पर दबाव भी अधिक नहीं बढ़ेगा। इससे देश का विकास भी कुप्रभावित नहीं होगा क्योंकि इसके अंतर्गत अधिकांश युवा अपने श्रम और विवेक को उत्पादकता में लगाए रखते हुए पढ़ाई कर सकते हैं। परंपरागत शिक्षा की तरह इसमें संरोध नहीं है, सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोग भी उच्च शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। औपचारिक उच्च शिक्षा की दुष्परिवर्तनशीलता और नियमों की नृशंसता से मुक्त दूरस्थ शिक्षा अपने लचीलेपन, सर्वसुलभता और अपेक्षाकृत सस्ती होने के कारण ही भौगोलिक एवं राजनैतिक सीमाओं को लांघकर विश्व के सभी देशों में आज लोकप्रिय हो रही है। औद्योगीकरण से संपन्न देश जापान आज इसी लीक पर चल रहा है। वह परंपरागत शिक्षा के साथ–साथ दूरस्थ शिक्षा पर भी बहुत अधिक ध्यान सकेंद्रित कर रहा है। यदि भारत के कदम भी इस ओर तेजी से बढ़ें तो उच्च शिक्षा के क्षेत्र में काफी प्रगति हो सकती है।

दूर शिक्षा की ओर बढ़ते कदम

यह खुशी की बात है कि भारत ने 1962 से ही इस दिशा में कदम बढ़ाने शुरू कर दिए थे। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने देश की आवश्यकता का अनुभव करते हुए केंद्रीय शिक्षा मंत्रालय की संस्तुति एवं उसके द्वारा गठित शिक्षा सलाहकार समिति की राह पर सन् 1962 में देश में दिल्ली विश्वविद्यालय के अंतर्गत स्कूल ऑफ कॉरेस्पांडेंस एंड कांटिन्यूइंग एजूकेशन के रूप में पत्राचार शिक्षा का श्री गणेश किया गया। बाद में जब पत्राचार शिक्षा के साथ दृश्य–श्रृव्य माध्यमों का अनुपूरक सामग्री के रूप में प्रयोग हुआ तब से पत्राचार शिक्षा को दूर शिक्षा नाम से अभिहित किया जाने लगा। देखते ही देखते अनौपचारिक शिक्षा की यह पद्धति दूर शिक्षा इतनी तेजी से विकसित हुई कि 1988 में देश में दूरस्थ शिक्षा संस्थानों की संख्या 45 तक

पहुंच गई। सितंबर 1985 में देश में दूर शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण विश्वविद्यालय इंदिरा गांधी मुक्त विद्यालय (इग्नू) की स्थापना हुई। अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त इस विश्वविद्यालय के शैक्षिक कार्यक्रमों की गुणवत्ता को देखते हुए दूरदर्शन ने 1991 से इसके कार्यक्रमों का प्रसारण करना भी शुरू कर दिया था, यही नहीं आकाशवाणी के मुंबई और हैदराबाद केंद्रों ने भी 1992 से इसके चुने हुए श्रव्य कार्यक्रमों का प्रसारण करना प्रारंभ कर दिया था। 26 जनवरी, 2000 को तो इग्नू ने ज्ञान दर्शन नाम से एक शैक्षिक चैनल ही शुरु कर दिया। आज उच्च शिक्षा से जुड़े छात्र इस शैक्षिक चैनल का लाभ उठा रहे हैं। इस विश्वविद्यालय की ऊंची साख की वजह से ही 2001 में इग्नू के विभिन्न पाठ्यक्रमों में 1.91 लाख छात्रों ने दाखिला लिया।

आज देश में इग्नू की तर्ज पर अनेक विश्वविद्यालय चल रहे हैं। ये हैं – बी.आर. अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश), नालंदा मुक्त विश्वविद्यालय, नालंदा (बिहार), कोटा मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान), यशवंतराव चव्हाण मुक्त विश्वविद्यालय, नासिक (महाराष्ट्र), भोज मुक्त विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्य प्रदेश), अंबेडकर मुक्त विश्वविद्यालय, अहमदाबाद (गुजरात), मुक्त विश्वविद्यालय, मैसूर (कर्नाटक), नेताजी सुभाष मुक्त विश्वविद्यालय, कोलकाता (पश्चिमी बंगाल), राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)। देश में आज दूर शिक्षा प्रणाली से मानविकी, सामाजिक विज्ञान, भौतिकीय और प्राकृतिक विज्ञान के साथ–साथ व्यावसायिक विषय क्षेत्रों जैसे – कृषि, कंप्यूटर अनुप्रयोग, शिक्षा, इंजीनियरिंग, प्रबंध नर्सिंग, पोषण आदि में व्यापक शिक्षा ग्रहण करने वाले छात्रों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। वर्ष 1985–86 में उच्च शिक्षा में कुल नामांकित छात्रों की संख्या 3.731 लाख थी। इनमें से 3.5 लाख छात्र औपचारिक उच्च शिक्षा में और 0.231 लाख छात्र दूर शिक्षा में नामांकित थे।

1998–99 में उच्च शिक्षा में कुल नामांकित छात्रों की संख्या बढ़कर 4.409 लाख हो गई इनमें से 3.9 लाख छात्र औपचारिक उच्च शिक्षा और 0.454 लाख छात्र दूर शिक्षा में नामांकित थे। इस तरह वर्ष 1988–89 में उच्च शिक्षा में नामांकित कुल छात्रों में से 10.3 प्रतिशत छात्र दूरस्थ शिक्षा माध्यम से शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु तथा दिल्ली में तो इसका अनुपात क्रमशः 40.20, 41.10 तथा 33.50 प्रतिशत था। विस्तृत जानकारी तालिका–2 में दर्शाई गई हैं।

तालिका–2

भारत में उच्च शिक्षा में नामांकन का वितरण
(वर्ष 1988–89)

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश	औपचारिक उच्च शिक्षा के विश्वविद्यालय तथा कालेज के विभिन्न विभागों में नामांकन	दूर शिक्षा में नामांकन	कुल नामांकन	कुल नामांकन में दूर शिक्षा का हिस्सा	दूर शिक्षा का सकेंद्रण अनुपात
दिल्ली	110921	55839	166760	33.5	12.3
हरियाणा	82588	2959	85547	3.5	0.7
हिमाचल प्रदेश	22437	18257	41695	46.2	4.2
जम्मू और कश्मीर	31256	939	33195	5.8	0.4
पंजाब	146574	16303	16287	10.0	3.6
राजस्थान	192990	22546	215536	10.5	5.0
उत्तर प्रदेश	548791	4769	553560	0.9	1.0
मध्य प्रदेश	287240	303	287543	0.1	0.1
गुजरात	232602	152	232754	0.1	0.1
महाराष्ट्र	514809	20423	535232	3.8	4.5
असम	87235	–	87235	–	–
बिहार	273303	3262	276565	1.2	0.69
मणिपुर	11941	–	119441	–	–
मेघालय/नगालैंड	10941	–	109441	–	–
उड़ीसा	78771	4323	83094	5.2	1.0
पं. बंगाल/त्रिपुरा/सिक्किम	303738	–	304738	–	–
आंध्र प्रदेश	299913	76075	375988	20.2	16.7
कर्नाटक	274103	17615	291718	6.0	3.9
केरल	153753	10194	163947	6.2	2.2
तमिलनाडु	283854	198284	482138	41.1	43.7
कुल योग	**3947922**	**454243**	**4402165**	**100.3**	**100.0**

स्रोतः– यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन, उद्धत अंसारी एम.एम. : इक्नामिक्स ऑफ डिस्टेंस हायर एजुकेशन, कंसेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, न्यू देहली, 1992, पृ. 42

वित्त/अनुदान के वितरण का एक कारगर एवं प्रभावी माध्यम– ग्रेडिंग/रेटिंग

उच्च शिक्षा के सीमित वित्तीय संसाधनों को देखते हुए यह भी आवश्यक है कि व्यय को कारगर एवं प्रभावी बनाया जाए। वित्त/अनुदान के वितरण को प्रभावी बनाने के लिए वित्त/अनुदान सुलभ कराने से पूर्व विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विश्वविद्यालयों/कालेजों का मूल्यांकन एवं प्रत्यायन होना चाहिए क्योंकि इस तकनीक को अपनाने से उच्च शिक्षा के जो संस्थान अच्छा आउटपुट देंगे वे अधिक वित्त/अनुदान के अधिकारी होंगे। यह खुशी की बात है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने इस कार्य

के लिए एक परिषद की स्थापना पहले से ही कर दी है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और इसके कार्य योजना अभिलेख में दी गई मार्गदर्शिका में व्यक्त अनुशंसाओं के आधार पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने 16 सितंबर, 1984 में राष्ट्रीय मूल्यांकन और प्रत्यायन परिषद (नैक) की स्थापना की। इसका मुख्य कार्यालय बंगलौर में है। यह परिषद उच्च शिक्षा संस्थाओं का मूल्यांकन और प्रत्यायन करती है। मूल्यांकन और प्रत्यायन के परिणामों के आधार पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विभिन्न योजनाओं के तहत वित्त/अनुदान दिया जाता है। उच्च शिक्षा के मूल्यांकन और प्रत्यायन के लिए नैक ने 7 मापदंड (पाठ्यक्रम संबंधी) पहलू, अध्यापन, अध्ययन तथा मूल्यांकन, अनुसंधान परामर्श एवं विस्तार, अधोसंरचना तथा अध्ययन के संसाधन, छात्र सहयोग एवं प्रगति, संगठन एवं प्रबंधन, स्वस्थ परंपराएं) चिन्हित किए हैं। इन सातों मापदंडों के आधार पर तथा स्व अध्ययन हेतु प्रपत्र में दी गई सूचनाओं के आधार पर उच्च शिक्षा संस्थाओं के भार/अंको का निर्धारण किया जाता है। विभिन्न मानदंडों के लिए जो अधिकतम अंक रखे गए हैं।

नैक का सम समूह (पीर ग्रुप) संस्था के स्कोर/अंकों का एक फार्मूले के आधार पर आकलन करता है और यह देखते है कि संस्था ने मूल्यांकन एवं प्रत्यायन के पश्चात् कितना स्कोर अर्जित किया है। इंस्टीट्यूशनल स्कोर निर्धारित हो जाने के बाद संस्था का ग्रेड निर्धारित किया जाता है। भिन्न–भिन्न स्कोरों पर संस्था का ग्रेड निर्धारित होता है।

कोई भी संस्था जो ग्रेड हासिल करती है, नैक द्वारा उस ग्रेड की जानकारी संस्था को दी जाती है। नैक द्वारा अब तक 70 विश्वविद्यालयों तथा 226 कालेजों का मूल्यांकन और प्रत्यायन किया जा चुका है। विवरण तालिका–3 में दर्शाया गया है।

नैक के मूल्यांकन तथा प्रत्यायन के पश्चात विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों को प्रदान किए जाने वाले वित्त/अनुदान के वितरण में पारदर्शिता आई है लेकिन चिंता की बात यह है कि अभी तक सभी विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों का मूल्यांकन एवं प्रत्यायन नहीं हो सका है।

उपाय एवं भावी नीति

साधनों की सीमितता के मद्देनजर उच्च शिक्षा में निजी क्षेत्र को बढ़ावा देना होगा लेकिन उस पर कारगर एवं प्रभावी नियंत्रण भी रखना होगा ताकि निजी क्षेत्र के संस्थान कमाई का साधन न बन सकें और शोषण को बढ़ावा न दे सकें। इन संस्थानों में ग्रामीण तबके के योग्य एवं मेधावी गरीब विद्यार्थियों को फीस में कुछ छूट देनी होगी और कुछ सीटें इन छात्रों के लिए सुरक्षित रखनी होंगी। निजी क्षेत्र के उच्च शिक्षा संस्थाओं का मांग–पूर्ति के अनुरूप ही विस्तार करना होगा। इनके पाठ्यक्रमों की गुणवत्ता की समय–समय पर जांच करनी होगी। इन संस्थानों को स्थाई मान्यता देने से पूर्व यह भी देखना होगा कि वे स्थाई मान्यता की समस्त शर्तें पूरी कर रहे हैं या नहीं। समस्त शर्तें पूरी करने पर ही स्थाई मान्यता दी जानी चाहिए। निजी क्षेत्र के साथ–साथ सार्वजनिक क्षेत्र के उच्च शिक्षा संस्थानों में भी ऐसी संस्कृति विकसित करनी होगी जिससे वे स्वयं वित्तीय संसाधन जुटा सकें ताकि सरकार पर उनकी निर्भरता कम हो। इनमें आधारभूत सुविधाओं पर भी ध्यान देना होगा ताकि गुणवत्ता सुधरे।

साधनों की सीमितता तथा परंपरागत शिक्षा के महंगेपन को दुखते हुए देश में समुचित संख्या में दूर शिक्षा संस्थानों का विस्तार करना होगा। दूर शिक्षा संस्थाओं को भी अपनी गुणवत्ता में सुधार लाने होंगें ताकि विद्यार्थियों का आकर्षण उनकी ओर बढ़े। योजनाकारों तथा नीति–निर्माताओं को यह ध्यान रखना होगा कि परंपरागत शिक्षा की वैकल्पिक शिक्षा की वैकल्पिक व्यवस्था दूर शिक्षा के साथ कोई सौतेला व्यवहार न हो।

नैक को सभी विश्वविद्यालयों तथा कालेजों का मूल्यांकन और प्रत्यायन समय पर कर लेना चाहिए। उच्च शिक्षा के विभिन्न संस्थानों को अच्छे ग्रेड/रेटिंग हासिल करने के प्रयत्न करने होंगे। इसके लिए उन्हें अच्छा आउटपुट देना होगा। उन्हें ऐसे प्रयास करने होंगें ताकि उन संस्थानों से अच्छे छात्र निकलें। वे छात्र यू.जी.सी., सी.एस.आई.आर., (नेट) परीक्षा, यू.जी.सी.–स्लेट परीक्षा, गेट, भारतीय सिविल सेवा परीक्षा, जी.आर.आई., टोफेल, जी.मैट जैसी परीक्षाएं आसानी से उत्तीर्ण कर सकें और जब वे नौकरी, व्यवसाय, राजनीति, समाजसेवा, अनुसंधान आदि कार्यों से जुडें तो राष्ट्र उन पर गर्व करे। ❑

(लेखक राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीसलपुर, पीलीभीत (उ.प्र.) के अर्थशास्त्र विभाग के रीडर और अध्यक्ष हैं।)

तालिका–3

मूल्यांकन एवं प्रत्यायन हो जाने वाले विश्वविद्यालयों तथा कालेजों की राज्यवार संख्या

राज्य/केंद्र	विश्वविद्यालयों की संख्या	कालेजों की संख्या
आंध्र प्रदेश	07	11
अरुणाचल प्रदेश	01	–
असम	02	01
चंडीगढ़	01	01
छत्तीसगढ़	–	01
गोवा	01	08
गुजरात	03	03
हरियाणा	02	04
जम्मू और कश्मीर	02	–
झारखंड	–	01
कर्नाटक	07	35
केरल	02	45
मध्य प्रदेश	04	03
महाराष्ट्र	10	29
मेघालय	02	01
उड़ीसा	01	–
पांडिचेरी	01	–
पंजाब	02	01
राजस्थान	01	–
तमिलनाडु	07	80
त्रिपुरा	01	–
उत्तरांचल	03	–
उत्तर प्रदेश	03	–
पश्चिम बंगाल	07	02
कुल योग	**70**	**226**

स्रोतः–नैक, "नैक : ए प्रोफाइल" राजाजी नगर, बंगलौर, पृ. 8 एवं 9

भूमंडलीकरण के दौर में शिक्षा पर प्रभाव

नरेन्द्र सिंह और सीमा देवी

आज भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में उदारीकरण, बाजार अर्थव्यवस्था, आर्थिक सुधार तथा भूमंडलीकरण के नाम पर एक नई पूंजीवादी, साम्राज्यवादी एवं उपनिवेशवादी विश्व व्यवस्था का अभियान चल रहा है। भूमंडलीकरण वर्तमान समय के व्यापारिक माहौल की ऐसी अवधारणा है जो पूरे विश्व को एक मंडल, एक केंद्र बनाने की बात करती है। आज भूमंडलीकरण प्रत्येक क्षेत्र का मुख्य विषय बन गया है क्योंकि इसने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है।

भूमंडलीकरण का आजकल बड़ा शोर है। इस शोर के जरिए मात्र यह साबित करने का प्रयास हो रहा है कि दुनिया अब सारे भेदभाव भुलाकर एक होने जा रही है। परंतु सच्चाई इसके विपरीत है, यह भूमंडलीकरण 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अन्तःप्रेरणा से अनुप्रेरित नहीं है बल्कि बाजार की बेलगाम शक्तियों के सहारे पश्चिम के प्रभुत्ववादी मंसूबे को ही पूरा करने की एक चतुर प्रक्रिया है। इसने अर्थव्यवस्था, राजनीति, तकनीक, संस्कृति, शिक्षा हर क्षेत्र को व्यापक रूप से अपनी चपेट में ले लिया है।

आज भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में उदारीकरण, बाजार अर्थव्यवस्था, आर्थिक सुधार तथा भूमंडलीकरण के नाम पर एक नई पूंजीवादी, साम्राज्यवादी एवं उपनिवेशवादी विश्व व्यवस्था का अभियान चल रहा है। पूर्वी यूरोप तथा सोवियत संघ में मौजूद समाजवाद के पतन की दुहाई देते हुए यह कहा जा रहा है कि अब उदारीकरण, निजीकरण व बाजार अर्थव्यवस्था ही तमाम समस्याओं के निवारण हेतु एकमात्र विकल्प एवं रामबाण दवा है।

किसी वस्तु, सेवा, विचार, पद्धति अथवा सिद्धांत को विश्वव्यापी बनाना ही उस वस्तु, सेवा, विचार, पद्धति अथवा सिद्धांत का वैश्वीकरण कहलाता है। अथवा एक देश का अन्य देशों के साथ वस्तु, सेवा, पूंजी एवं बौद्धिक संपदा का अप्रतिबंधित आदान–प्रदान ही वैश्वीकरण है।

भूमंडलीकरण वर्तमान समय के व्यापारिक माहौल की ऐसी अवधारणा है जो पूरे विश्व को एक मंडल, एक केंद्र बनाने की बात करती है। आज भूमंडलीकरण प्रत्येक क्षेत्र का मुख्य विषय बन गया है क्योंकि इसने समाज के प्रत्येक क्षेत्र को अत्यंत प्रभावित किया है। जैसे – रोजगार के क्षेत्र में, कृषि क्षेत्र में गरीबी पर प्रभाव, अर्थव्यवस्था पर प्रभाव, महिला वर्ग पर प्रभाव व समाज के गरीब, दलित, कमजोर वर्ग पर प्रभाव तथा मानव विकास के सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र शिक्षा पर प्रभाव।

यदि हम अवलोकन करें तो पाते हैं कि बाजार की नीतियां सभी स्थानों पर लागू होती हैं चाहे वह शिक्षा ही क्यों न हो। अतः शिक्षा मानव विकास की रीढ़ है। हमारी शिक्षा का प्रशासनिक ढांचा ही यह सुनिश्चित करता है कि समाज के बहुमुखी विकास में हम युवाओं को उपयोगी शिक्षा देने में कितने सक्षम हैं।

यह बात सभी स्वीकार करते हैं कि सुव्यवस्थित और सुसंस्कृत संपूर्ण विकास के लिए अच्छी शिक्षा परमावश्यक है। परंतु भूमंडलीकरण की इस मार से देश का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र शिक्षा भी नहीं बचा है। बुनियादी शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा व उच्च शिक्षा की स्थिति में जहां एक ओर सुधार हुआ है, वहीं पर शिक्षा के निजीकरण के कारण साक्षरता दर में आशानुरूप सुधार नहीं हुआ है। आज भी 29 करोड़ से अधिक प्रौढ़ लोग निरक्षर बने हुए हैं एवं लगभग 3 करोड़ 80 लाख बच्चे विद्यालय का मुंह नहीं देख पाते। वर्ष 1996–97 में सकल राष्ट्रीय उत्पाद का मात्र 3.8 प्रतिशत शिक्षा पर लगा। इसी प्रकार प्रारंभिक शिक्षा को प्राथमिकता देने के शोर के बीच वास्तव में 1990 के दशक के दौरान प्रारंभिक शिक्षा पर चालू सार्वजनिक खर्च सकल राष्ट्रीय उत्पाद के 1.69 फीसदी से घटकर 1.47 फीसदी हो गया है। शिक्षा एवं साक्षरता के प्रति ऐसे रवैये के बीच करोड़ों लोगों को निरक्षरता के अंधेरे में डुबोए रखकर हम सूचना प्रौद्योगिकी की चमक कहां बिखेरना चाहते हैं। मौलिक अधिकारों के अनुसार – 'शिक्षा पर सबका समान अधिकार है।' परंतु अब यह मौलिक अधिकार नहीं, मात्र धनी वर्ग का अधिकार बन गया है। शिक्षा को सार्वजनिक पकड़ से दूर करके इसके निजी–एकाधिकार पर अधिक बल दिया जा रहा है। शिक्षा का बाजारीकरण कर निजीकरण करने की तमाम बातें चल रही हैं जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा बाजार की वस्तु हो जाएगी। विद्यालय, महाविद्यालय दुकान हो जाएंगे और इन सब की नकेल किसी बड़ी कंपनी के हाथों में होगी। अतः वैश्वीकरण की नीतियां आम जनता के हित में नहीं हैं क्योंकि वैश्वीकरण प्रकृति के साधनों को बेरहमी से लूटता है और वह हथियारों की शक्ति, पूंजी की शक्ति और ज्ञान या टेक्नोलॉजी की शक्ति से कमजोर देशों को अपना गुलाम बनाता है।

भूमंडलीकरण का एक प्रभाव यह भी है कि शिक्षा पर दी जाने वाली सब्सिडी में कटौती हो रही है। शिक्षा को ठेके पर दिए जाने की व्यवस्था की जा रही है क्योंकि समाज के एक वर्ग का मानना है कि समाज के सभी वर्गों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होगा। जबकि वास्तविकता यही दर्शा रही है

कि निजीकरण केवल मध्यम तथा उच्च वर्ग को ही फायदा पहुंचा रहा है। आज देश में 36 करोड़ लोग अशिक्षित हैं, ये सरकारी आंकड़े हैं तथा यथार्थ में परिदृश्य और भी भयानक है। देश के करीब 260 विश्वविद्यालयों की अस्मिता इस समय खतरे में पड़ गई है।

स्वास्थ्य, रक्षा, दूरसंचार और वित्त के साथ ही विद्यालय की शिक्षा भी 1994 के गैट प्रावधान में शामिल थी और अब डब्लूटीओ के सदस्य देशों में 40 देश इस बात पर तैयार हो गए हैं कि गैट के तहत खुलने वाली सेवाओं में शिक्षा को भी शामिल किया जाये। जिसके परिणामस्वरूप कुछ मुट्ठीभर कंपनियों को खुली छूट मिलेगी और वे अपनी इच्छानुसार शाखा खोलकर शिक्षा देंगी, जो खास प्रणाली पर आधारित होगी और यथार्थ का एक दृष्टिकोण पेश करेगी।

देश में शिक्षा के क्षेत्र में समानता होने के बजाय असमानता बढ़ रही है। जहां 1991 में राजस्थान के आदिवासियों के बीच साक्षरता दर 19 प्रतिशत थी, वहीं पर मिजोरम में 80 प्रतिशत थी। आज भारत महंगी शिक्षा पद्धति के कारण एक तरफ धनी तो दूसरी ओर निर्धन लोगों का देश बनकर रह गया है। अब शिक्षा प्राप्त करना गरीबों के वश की बात नहीं है। विश्वविद्यालय में सरकार सब्सिडी में कटौती कर रही है। जिससे विद्यालयों, महाविद्यालयों की फीस में कई गुना वृद्धि हो रही है। अतः विश्व की बहुसंख्या के लिए वैश्वीकरण ने अच्छे और लाभकारी परिणाम नहीं पैदा किए, बल्कि देशों के अंदर तथा देशों के बीच में आमदनी की असमानताएं, विश्व की 20 प्रतिशत अमीर देशों की जनसंख्या तथा गरीब से गरीब देशों की जनसंख्या की आमदनी का अंतर 1960 में 30 : 1 से 1995 में 82 : 1 हो गया है तथा तीसरी दुनिया की हालत और भी खराब हो गई है। पिछले 20 वर्षों से 70 देशों से भी अधिक में प्रति व्यक्ति आय कम हुई, विश्व की जनसंख्या का लगभग आधा भाग अर्थात् लगभग तीन अरब लोग 2 डालर प्रतिदिन की आय पर जी रहे हैं तथा 80 करोड़ लोग भोजन की कमी से पीड़ित हैं। तीसरी दुनिया में बेरोजगारी तथा आर्थिक रोजगार की भरमार है क्योंकि विशिष्ट वर्ग की समृद्धि के साथ–साथ बड़े भारी स्तर पर गरीबी विद्यमान है तथा 7.5 करोड़ लोग प्रतिवर्ष या तो रोजगार के लिए या फिर शरण पाने के लिए उत्तर में जा रहे हैं।

एक तरफ जहां देश की सरकार के पास शैक्षिक गतिविधियों की देख–रेख करने हेतु भारी–भरकम मंत्रालय है। लेकिन दूसरी ओर वह शैक्षिक सुधारों पर नीति–रिपोर्ट तैयार करने के लिए निजी क्षेत्र के उद्यमियों और एजेंसियों का सहारा ले रही है तो क्या ये समझ लेना चाहिए कि अब सरकार से शैक्षणिक कार्य नहीं हो पा रहे हैं और इसलिए यह अपने संस्थानों को निजी क्षेत्र के नियंत्रण में करता जी रही है। आंकड़ों के अनुसार 838 संस्थानों में से सिर्फ 230 संस्थान ही सरकार के अधीन हैं। बाकी सब निजी क्षेत्र के नियंत्रण में हैं। जिसके परिणामस्वरूप ये संस्थान डोनेशन के रूप में मोटी रकम लेकर प्रवेश दे रहे हैं। इसलिए कैसे भरोसा किया जाए कि निजी क्षेत्र के नियंत्रण के संस्थान भी भविष्य में अच्छी शिक्षा प्रदान करें।

वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में शिक्षा का विस्तार शहरी क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक व्यापक व तीव्र गति से हुआ है। शिक्षा स्तर व गुणवत्ता के मध्य खाई बढ़ी है। जहां कान्वेंट स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चे प्राथमिक स्तर पर ही आधुनिक सूचना व संचार माध्यमों द्वारा शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। वहीं देश के अधिकतर बच्चे खुले आसमान के नीचे बिना कापी–पुस्तक के शिक्षा प्राप्त करने को बाध्य हैं।

इस व्यवस्था ने शिक्षित युवा वर्ग को इतना प्रभावित किया है कि शैक्षिक बेरोजगारी की प्रवृत्ति बढ़ रही है। उद्योगपति अपने उद्योगों में देश के कुछ प्रमुख व ख्याति प्राप्त विद्यालयों से ही रोजगार दे पाने में ही सक्षम होते हैं तथा असंख्य विद्यार्थी व्यवसायिक डिग्री लिए दिशाहीन होकर सड़कों पर घूम रहे हैं तथा यह सब शिक्षा पर भूमंडलीकरण का ही प्रभाव है।

यदि अनेक देशों में देखें तो वहां पर भी इस भूमंडलीकरण का विपरीत प्रभाव ही पड़ा है। पिछले दशक के दौरान जहां शिक्षा के क्षेत्र में लिंग अंतराल कम हुआ है, वहीं अधिकांश दक्षिण एशिया, अफ्रीका के उप–सहारा तथा अनेक दूसरे विकासशील क्षेत्रों में लड़कियों की अपेक्षाकृत उपेक्षित स्थिति उन्हें माध्यमिक शिक्षा से वंचित कर देती है। वर्ष 2000 में 18 प्रतिशत पुरुषों की तुलना में लगभग 31 प्रतिशत महिलाएं ऐसी थीं, जिन्होंने कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की थी।

निजी संस्थान दिनों–दिन बढ़ते जा रहे हैं। जहां समाज के एक वर्ग की नजर में ये सही हैं और अच्छी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं तो फिर प्रश्न यह उठता है कि ये संस्थान जो दुकान का रूप ग्रहण कर रहे हैं, क्या ये गरीब, अल्पसंख्यक, दलित व पिछड़े वर्ग को निःशुल्क शिक्षा दे पाएंगे? नहीं, जबकि सरकार को सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े विद्यार्थी को शिक्षा के समान अवसर दिलाने के लिए सचेष्ट रहना पड़ता है। आजादी के 57 वर्षों के पश्चात् भी देश के बहुत से विद्यार्थी आरक्षण व वजीफे की व्यवस्था के कारण ही अपनी शिक्षा पूरी कर पाते हैं और निजी–संस्थान किसी को भी इतनी सुविधाएं प्रदान नहीं कर सकते, क्योंकि उन्हें अपनी आर्थिक आमदनी से अधिक मतलब होता है।

संविधान के अनुच्छेद 41 के अनुसार सरकार अपनी सामर्थ्य के अनुसार सभी को शिक्षा से पुष्ट करेगी, लेकिन जिस प्रकार सरकार शिक्षा का निजीकरण कर रही है। तब वह दिन दूर नहीं जब इतिहास स्वयं को दोहराएगा अर्थात् पहले की तरह शिक्षा केवल धनी वर्ग तक ही सीमित होकर रह जाएगी। क्योंकि ये शिक्षा के नाम पर लाखों में फीस लेते हैं और जिसका खामियाजा भुगतना पड़ता है, निर्धन युवा वर्ग को जो इतनी महंगी फीस जमा नहीं कर सकते। गरीब प्रतिभाशाली विद्यार्थी एक अभिशाप बनकर रह गया है। इन्हीं संस्थानों के कारण घर बैठे डिग्री खरीदी जा रही है।

भूमंडलीकरण के इस दौर में शिक्षक अभिभावक तथा विद्यार्थी इन तीनों का इन महंगे निजी–संस्थानों के कारण मानसिक तथा आर्थिक शोषण हो रहा है। क्योंकि शिक्षा समाज का दर्पण है और विद्यार्थी व शिक्षक वर्ग ही भावी समाज का निर्माण करते हैं। इनके प्रभाव के कारण संपूर्ण देश ही नहीं, विश्व पर भयानक प्रभाव पड़ता है। चाहे वह आर्थिक क्षेत्र में हो या राजनीतिक क्षेत्र में या फिर सामाजिक व शैक्षिक क्षेत्र में। इस तरह प्रतीत होता है कि निरक्षरता की भीषण चुनौती भारत के लिए 21वीं सदी में भी अपनी पूरी व्यापकता से बरकरार रहेगी।

आज का निजीकरण मात्र यही चाहता है कि शिक्षा उनकी हित साधक बने। संपूर्ण विश्व वैश्वीकरण की प्रक्रिया में फंसता जा

रहा है। आम लोगों को दरकिनार कर निजीकरण की प्रक्रिया चल रही है। इसलिए आज आवश्यक है कि इस प्रक्रिया को नियमों से बाधित कर दिया जाए। क्योंकि सभी ये स्वीकार करते हैं कि संपूर्ण विश्व के साथ चलने के लिए निजीकरण आज की आवश्यकता बन गया है। इसलिए विश्व के सभी देशों में तीव्र गति से हो रहे आर्थिक परिवर्तनों के इस युग में यह आवश्यक है कि हम अपनी शिक्षा व्यवस्था में अनुकूल सुधार करें, अन्यथा शिक्षा के क्षेत्र में प्राचीन काल से ही अपनी गरिमा स्थापित करने वाला भारत का भविष्य और भी अंधकारमय व कष्टकारी हो सकता है।

आज की शिक्षा मैकाले पद्धति के आधार पर दी जा रही है। अंग्रेजी व्यवस्था बनाए रखने के लिए अंग्रेजी बाबू का निर्माण किया जा रहा है क्योंकि बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने प्रवर्तकों–नियंत्रकों के देश में आधारित होती हैं और इन राष्ट्रों पर राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था पर दबदबा इन कंपनियों का ही रहता है। अतः युवा वर्ग को देश व समाज के यथार्थ से दूर रखा जा रहा है और बहुराष्ट्रीय कंपनियों में नौकरी पाना इनका एकमात्र लक्ष्य बन गया है, जिस कारण आज अपने ही देश में शिक्षा प्राप्त करने वाले युवकों में न तो देश की समस्याओं व चुनौतियों से जूझने का साहस है, न आत्मविश्वास ही है।

शिक्षा के जरिए आदमी तंगी और निम्न आर्थिक स्तर से निकलकर जीवन में आगे बढ़ जाता है। इस प्रकार शिक्षा मानव को गतिशील बनाती है। भारत भी औद्योगिक विकास करने की हर संभव कोशिश कर रहा है और इसके लिए उसे शिक्षित जनता की सख्त जरूरत है, न कि भूमंडलीकृत कुंठित बाजारू व्यक्ति की। शिक्षित मानव आय का स्रोत ढूंढकर गरीबी को भगा देता है। भूमंडलीकरण की व्यवस्था ने शिक्षा को जिस रूप में लाने की कोशिश की है वह अत्यंत विचित्र स्थिति पैदा करती है क्योंकि किसी भी प्रकार के विकास में शिक्षा का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान होता है तथा विकास का प्रमुख साधन है मानव और उसके विकास में सर्वप्रमुख स्थान है शिक्षा का; भारत इस दौड़ में पिछड़ न जाए, इसके लिए आवश्यक है कि देश में सही शिक्षा नीतियों के अंगीकरण द्वारा शिक्षा का न केवल विस्तार हो, अपितु उसमें गुणात्मक सुधार लाने के भी प्रभावी उपाय किए जाएं। ❑

(दोनों लेखक चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ के राजनीति विज्ञान विभाग से संबद्ध हैं)

स्वरोजगार कार्यक्रमों का प्रचार-प्रसार करें : सूचना और प्रसारण मंत्री

केंद्रीय सूचना और प्रसारण तथा संस्कृति मंत्री श्री एस. जयपाल रेड्डी ने 'रोजगार समाचार' से आह्वान किया है कि वह स्वरोजगार के अवसर उत्पन्न करने के कार्यक्रमों का जोर–शोर से प्रचार–प्रसार करें। शुक्रवार को नई दिल्ली में 'रोजगार समाचार' के वर्ष 2004 के स्वतंत्रता दिवस विशेषांक का विमोचन करते हुए श्री रेड्डी ने 'रोजगार समाचार' से आग्रह किया कि वह असंगठित क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित करे क्योंकि यही वह क्षेत्र है जिसमें हमारी श्रमशक्ति में से अधिकांश को रोजगार के अवसर उपलब्ध होते हैं। 'रोजगार समाचार' का यह विशेषांक राजीव गांधी को समर्पित है और सद्भावना के अग्रदूत के रूप में उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को रेखांकित करता है। श्री रेड्डी ने कहा कि 'रोजगार समाचार' को सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों के प्रचार– प्रसार के साथ–साथ विकास से संबंधित समाचारों और लेखों को अधिक महत्व देना चाहिए।

श्री रेड्डी ने निर्देश दिया कि 'रोजगार समाचार' को सरकारी क्षेत्र के रोजगारोन्मुख कार्यक्रमों के विज्ञापन के लिए अपने आप को पूरी तरह समर्पित कर लेना चाहिए। उन्होंने कहा कि इसमें निजी शिक्षा संस्थानों और उनमें प्रवेश संबंधी नोटिस नहीं छापने चाहिए। ऐसे लोगों की कामयाबी की कथाएं भी प्रकाशित करनी चाहिए जो अपनी उद्यमिता के बलबूते पर स्व–रोजगारी बने हैं।

स्वर्गीय राजीव गांधी को श्रद्धा सुमन अर्पित

करते हुए सूचना और प्रसारण मंत्री ने कहा कि उन्हें अक्सर 'भारत के सूचना टेक्नोलॉजी का जनक' भी माना जाता है। वह एक ऐसे व्यक्ति थे जो अकेले एक समूची सेना के समान शक्तिशाली थे। चाहे दूरसंचार जैसा अग्रणी क्षेत्र हो या पेयजल, तिलहन उत्पादन या जैव–मंडल के संरक्षण का मुद्दा हो, तमाम क्षेत्रों में राजीव गांधी ने महत्वपूर्ण योगदान किया है। उन्होंने कहा कि राजीव गांधी ने अपनी सोच, विचार और कर्म से 21वीं शताब्दी में भारत को विश्व–बाजार के अग्रणी देशों में स्थान दिलाने के लिए महत्वपूर्ण योगदान किया। सचमुच हैरानी होती है कि कैसे कोई व्यक्ति अकेले इतना महत्वपूर्ण कार्य कर सकता है।

उन्तीस साल पहले 'रोजगार समाचार' के प्रकाशन की शुरुआत का जिक्र करते हुए अखिल भारतीय समाचार पत्र संपादक सम्मेलन के अध्यक्ष श्री विश्व बंधु गुप्ता ने साप्ताहिक के कर्मियों से कहा कि 'रोजगार समाचार' को असंगठित क्षेत्र के युवाओं की आवश्यकताओं का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए क्योंकि उन्हें रोजगार के अवसरों और कार्यक्रमों के बारे में लगातार सूचनाओं की आवश्यकता होती है।

सामाजिक विज्ञान संस्थान के निदेशक डा. जॉर्ज मैथ्यू ने पंचायती राज मंत्रालय के गठन के लिए संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन के नेतृत्व वाली सरकार की सराहना की और कहा कि इससे स्वर्गीय राजीव गांधी का स्वप्न पूरा हो गया है। उन्होंने कहा कि स्वर्गीय राजीव गांधी के मन में समाज के सबसे निचले स्तर के लोगों को अधिकार संपन्न बनाने की प्रबल इच्छा थी। डा. मैथ्यू ने 'रोजगार समाचार' के माध्यम से स्थानीय निकायों को विशेष रूप से ध्यान में रखते हुए महिलाओं और कमजोर वर्गों को अधिकार संपन्न बनाने की आवश्यकता पर भी जोर दिया।

भारत में महिला साक्षरता की स्थिति

डा. मुकेश कुमार शर्मा

किसी भी राष्ट्र अथवा क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में वहां की श्रमशक्ति, मानव संसाधन के आकार, कार्य तथा कार्य में नियमितता का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इस प्रकार का समग्र विकास तभी संभव हो सकता है जब उस समाज में महिलाओं तथा पुरुषों को समानता प्राप्त हो। यह समानता कानूनी तौर पर तथा सैद्धांतिक होने के साथ-साथ समाज में व्यावहारिक तौर पर स्वीकार होना भी अति आवश्यक है क्योंकि व्यावहारिक तौर पर समान अधिकार न होने पर कानूनी और सैद्धांतिक अधिकारों का होना लगभग निरर्थक है।

किसी भी राष्ट्र के विकास में उस क्षेत्र में निवास कर रहे मानव संसाधनों का योगदान बेहद महत्वपूर्ण होता है। मानव इतिहास भी इस बात का गवाह रहा है कि विश्व में विभिन्न युगों में निर्मित होने वाली गौरवशाली विश्व सभ्यताओं के निर्माण तथा विकास का श्रेय मानव को ही जाता है। इस प्रकार जिस राष्ट्र का मानव संसाधन जितना अधिक शिक्षित तथा बुद्धिजीवी होगा वह राष्ट्र उतना ही अधिक प्रगतिशील तथा विकसित होगा। किसी भी राष्ट्र अथवा क्षेत्र के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में वहां की श्रमशक्ति एवं मानव संसाधन के आकार, कार्य का गुणात्मक स्वरूप तथा कार्य में नियमितता का महत्वपूर्ण योगदान होता है। इस प्रकार का समग्र विकास तभी संभव हो सकता है जब उस समाज में महिलाओं तथा पुरुषों को समान अधिकार तथा समानता प्राप्त हो। यह अधिकार और समानता कानूनी तौर पर तथा सैद्धांतिक तौर पर होने के साथ–साथ समाज में व्यावहारिक तौर पर स्वीकार होना भी अति आवश्यक है क्योंकि व्यावहारिक तौर पर समान अधिकार न होने पर कानूनी और सैद्धांतिक अधिकारों का होना लगभग निरर्थक है।

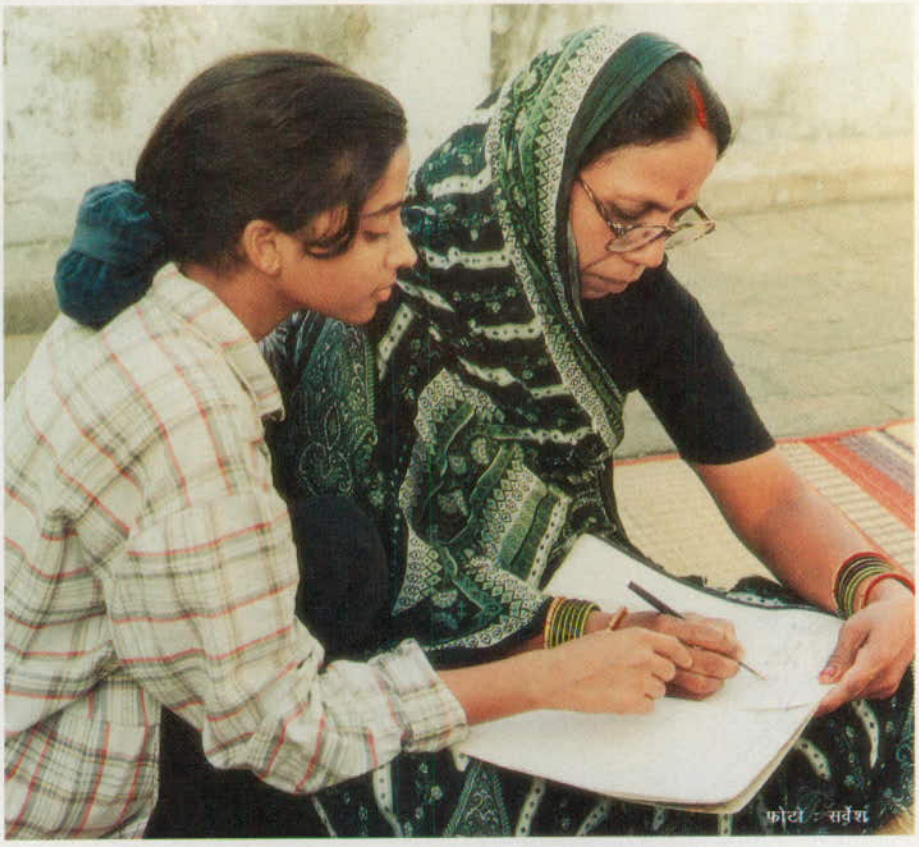
फोटो : सुरेश

भारत के जनसंख्या परिदृश्य पर एक नजर डालें तो ज्ञात होता है कि भारत में वर्ष 2001 में औसत साक्षरता दर 65.38 प्रतिशत थी, जिसमें पुरुष साक्षरता दर 75.85 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 54.16 प्रतिशत थी। इस साक्षरता दर से सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि देश में महिला साक्षरता में काफी पिछड़ापन है जिसमें काफी कुछ किए जाने की सख्त और त्वरित आवश्यकता है। महिला शिक्षा के बारे में सुप्रसिद्ध समाजसेविका

फोटो : संदेश

दुर्गाबाई देशमुख का कहना था कि 'एक लड़के की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है जबकि एक लड़की की शिक्षा एक पूरे परिवार की शिक्षा है।' इस कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में स्त्रियों की अशिक्षा ही शिक्षा के लोकव्यापीकरण में सबसे बड़ी बाधा है।

भारत में परंपरागत तथा रूढ़िवादी समाज में भी महिला साक्षरता को अनावश्यक समझा जाता रहा है, जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान में भी महिला साक्षरता की स्थिति बेहद दयनीय बनी हुई है। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध समाज सुधारक महात्मा ज्योतिबा फुले की भी यह स्पष्ट राय थी कि कोई भी समाज तब तक सच्चे अर्थों में शिक्षित नहीं हो सकता जब तक उस समाज की महिलाएं शिक्षित नहीं हो जातीं। एक शिक्षित महिला परिवार में जो सुसंस्कार डाल सकती है वो कार्य हजार अध्यापक तथा गुरु भी नहीं कर सकते हैं। जब तक देश की आबादी का आधा भाग (नारी समाज) शिक्षित नहीं हो जाता तब तक कोई भी देश समग्र प्रगति कैसे कर सकता है? तत्कालीन समय में अहमद नगर (महाराष्ट्र) ईसाई पादरियों के शिक्षा कार्य का एक महत्वपूर्ण केंद्र बना हुआ था। ज्योतिबा फुले ने अहमद नगर में मिशनरियों द्वारा चलाई जा रही कन्या पाठशाला की गतिविधियों का अवलोकन किया, जिसका संचालन मिस फरेरा कर रही थीं तो ज्योतिबा फुले ने सोचा कि मिस फरेरा न इस देश की हैं और न ही किसी की सगी संबंधी हैं, फिर भी यह गोरी महिला यहां मटमैली लड़कियों को उजला बनाने की कोशिश कर रही हैं। दूसरी ओर हमारे पुणे के कट्टरपंथी व रूढ़िवादी ब्राह्मण हैं, जो ऐसी लड़कियों को देखकर नाक–भौं सिकोड़ते हैं। तत्कालीन समाज में ज्योतिबा फुले ने महिला शिक्षा की वकालत करते हुए पुणे की बुद्धवार पैंठ में श्री विडे के मकान में अपनी कन्या पाठशाला प्रारंभ की तथा नारी शिक्षा का कार्य आरंभ कर ज्योतिबा फुले ने सार्वजनिक क्षेत्र में कदम रखा। यह पाठशाला ज्योतिबा फुले जैसे गैर–ब्राह्मण ने प्रारंभ की तथा उसमें लड़कियां पढ़ने लगीं।

यह देखकर पुणे के कट्टरपंथी व रूढ़िवादी लोगों का खून खौल उठा तथा उन्होंने इस प्रयास की कठोरतम आलोचना करते हुए इसे धर्म तथा शास्त्रों के विरुद्ध बताया। उनकी नजर में महिला शिक्षा घोर पाप था, लेकिन ज्योतिबा फुले अपने कार्य में प्राणपण से जुटे रहे तथा उन्होंने महाराष्ट्र में नारी शिक्षा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया, जो कि उस समय एक बहुत बड़ी क्रांतिकारी सामाजिक घटना थी। स्वामी दयानंद सरस्वती तथा महात्मा गांधी भी भारतीय नारी समाज की दयनीय स्थिति से बेहद चिंतित थे और समाज तथा देश के उत्थान और समग्र विकास के लिए नारी शिक्षा को बेहद जरूरी समझते थे। इन दोनों महापुरुषों ने नारी शिक्षा के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण तथा सराहनीय कार्य किए।

भारत में नारी साक्षरता की स्थिति

जनगणना 2001 के आंकड़ों के अनुसार देश में नारी साक्षरता दर 54.16 प्रतिशत थी जो कि पुरुष साक्षरता दर (75.85 प्रतिशत) से 21.68 प्रतिशत कम थी। भारत में सर्वाधिक महिला साक्षरता दर केरल तथा मिजोरम में क्रमशः 87.86 प्रतिशत तथा 86.13 प्रतिशत थी। इसके अतिरिक्त लक्षद्वीप (81.56 प्रतिशत), गोवा (75.51 प्रतिशत) तथा दिल्ली (75.00 प्रतिशत) में भी साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत से काफी अधिक थी। जबकि सबसे कम महिला साक्षरता दर बिहार (33.57 प्रतिशत), झारखंड (31.38 प्रतिशत) तथा जम्मू–कश्मीर (41.82 प्रतिशत) में थी। हिंदी क्षेत्र के अधिकांश राज्यों छत्तीसगढ़ (52.40 प्रतिशत), मध्य प्रदेश (50.28 प्रतिशत), राजस्थान (44.34 प्रतिशत) तथा उत्तर प्रदेश (42.98 प्रतिशत) की महिला साक्षरता दर राष्ट्रीय महिला साक्षरता दर से नीची रही है। चूंकि इन राज्यों में देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग निवास करता है, अतः यहां की महिला साक्षरता की निम्न दर राष्ट्रीय साक्षरता औसत पर काफी नकारात्मक प्रभाव डालती है। इसी निम्न साक्षरता दर के कारण हिंदी क्षेत्र के इन राज्यों में स्वास्थ्य तथा जनसंख्या जैसे क्षेत्रों की स्थिति काफी निराशाजनक है, जबकि इसके विपरीत अधिक महिला साक्षरता दर वाले राज्यों केरल, गोवा, मिजोरम, चंडीगढ़, दिल्ली आदि राज्यों के स्वास्थ्य तथा जनसंख्या नियंत्रण जैसे क्षेत्रों में अच्छा प्रदर्शन रहा है। अच्छी महिला साक्षरता दर का समाज में व्याप्त सामाजिक कुप्रथाओं तथा कुरीतियों को समाप्त करने में भी काफी प्रभाव पड़ता है, जो कि भारत की वर्तमान आर्थिक व सामाजिक परिस्थिति में बेहद आवश्यक है।

महिला शिक्षा क्षेत्र की समस्याएं

वास्तविकता में महिलाओं की अशिक्षा ही शिक्षा के लोकव्यापीकरण में सबसे बड़ी बाधा है। यदि महिला साक्षरता दर देश में अधिक होगी तो देश की कुल साक्षरता दर भी तुलनात्मक तौर पर अधिक होगी क्योंकि एक शिक्षित महिला अपने समस्त परिवार को शिक्षित करने में अहम भूमिका का निर्वाह करती है। महिला शिक्षा के विकास में सबसे बड़ी बाधा देश की सामाजिक परिस्थितियां हैं, जिनके तहत लोगों की परंपरागत व रूढ़िवादी मानसिकता, महिला शिक्षा को गैर जरूरी मानती है तथा लोग लड़कियों की शिक्षा पर ध्यान देना आवश्यक नहीं समझते हैं। साथ ही लड़कियों को पराया धन समझने की सोच भी महिला शिक्षा पर निवेश को आर्थिक तौर पर बोझ मानती है।

हालांकि धीरे–धीरे समाज की मानसिकता में काफी परिवर्तन आया है तथा लोग बालिकाओं की शिक्षा के प्रति कुछ सचेत भी हुए हैं। लेकिन देश के पिछड़े, अनुसूचित जातियों तथा अल्पसंख्यकों के एक बड़े वर्ग की मानसिकता वर्तमान में भी परंपरावादी है, जो कि इन वर्गों में महिला साक्षरता की राह में एक बड़ा अवरोध है।

इसके अतिरिक्त समाज में जारी दहेज की कुप्रथा भी महिला उच्च शिक्षा की राह में एक बड़ी बाधा है, क्योंकि लोगों की मानसिकता होती है कि लड़की जितनी अधिक पढ़ी लिखी होगी, उसकी शादी में उतना ही अधिक दहेज देना होगा। देश के अनेक भागों में जारी बाल विवाह की कुप्रथा भी महिला शिक्षा की दर को कम करने के लिए काफी हद तक जिम्मेदार है। साथ ही भारतीय परिवारों का आंतरिक परिवेश तथा लड़कियों पर प्रारंभ से ही घरेलू दायित्वों का बोझ भी उन्हें पढ़ने के प्रति हतोत्साहित करता है तथा लड़कियों की सुरक्षा पर अभिभावकों की सोच भी लड़कियों को शिक्षा के लिए घर से दूर जाने के लिए हतोत्साहित करती है।

इनके अतिरिक्त अन्य ऐसे कारण भी हैं जो महिला शिक्षा की राह में अवरोधक का कार्य करते हैं, जिनमें लड़कियों का शिक्षा के लिए प्रेरणा का अभाव, परंपरागत रीति–रिवाज, आर्थिक तौर पर पिछड़ापन, लड़कियों की श्रम में भागीदारी आदि प्रमुख हैं।

सुझाव

यह निर्विवाद सत्य है कि किसी भी देश तथा समाज के समग्र विकास के लिए पूर्ण महिला साक्षरता का होना बेहद आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा के माध्यम से एक नवीन जागृत्ति लाई जा सकती है। इसके लिए कुछ सुझाव निम्नांकित हैं:–

- जनता में चेतना का प्रसार करने एवं बुनियादी शिक्षा कार्यक्रम को साकार करवाने में स्थानीय समाज सुधारकों तथा स्वयंसेवी संस्थाएं प्रभावशाली भूमिका निभा सकती हैं। वर्तमान में महिला शिक्षा के क्षेत्र में कई संस्थाएं कार्यरत हैं, लेकिन वे अपर्याप्त हैं और उनमें वृद्धि किए जाने की आवश्यकता है।
- महिला शिक्षा के लिए अति आवश्यक है कि स्कूलों की भौगोलिक दूरी को कम से कम किया जाए तथा ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक गांव व टोलों में नवीन स्कूल खोले जाएं, जिससे लड़कियों को अपने निवास स्थान के निकट ही शिक्षा प्राप्त हो सके तथा उनमें सुरक्षा का भाव भी उत्पन्न हो।
- सरकारी विद्यालयों में बुनियादी सुविधाओं के अभाव ने भी साक्षरता दर को प्रभावित किया है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों के सरकारी विद्यालयों में बुनियादी सुविधाओं तथा शैक्षिक उपकरणों का होना अति आवश्यक है, जिससे बच्चों में शिक्षा के प्रति रुझान में वृद्धि हो।
- महिला शिक्षा के क्षेत्र में सबसे बड़ी बाधा आर्थिक पिछड़ापन तथा निर्धनता है। अतः सरकार को पिछड़े तथा कमजोर वर्गों में बालिका शिक्षा के प्रति उत्साह जगाने के लिए आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए ठोस पहल करनी चाहिए।
- उच्च महिला साक्षरता दर के लिए आवश्यक है कि देश में अनिवार्य शिक्षा कार्यक्रम को सख्ती से लागू किया जाए तथा अपनी लड़कियों को स्कूल न भेजने वाले अभिभावकों के प्रति कार्यवाही भी की जाए। साथ ही कमजोर वर्ग की लड़कियों को दी जाने वाली छात्रवृत्ति आदि को निष्पक्षता तथा ईमानदारी के साथ वितरित कराया जाए। जिससे अभिभावक भी बालिका शिक्षा के प्रति जागरूक तथा सचेत हों।
- सरकार द्वारा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा से संबंधित 93 वें संविधान संशोधन अधिनियम को ईमानदारी के साथ लागू करते हुए इसे 6 से 14 आयु वर्ग के समस्त बच्चों की अनिवार्य व निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा लक्ष्य को पूरा करने का गंभीर प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।
- सरकार को सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में रिक्त पदों पर योग्य शिक्षकों की नियुक्ति अतिशीघ्र करनी चाहिए, जिससे शिक्षण कार्य प्रभावित न हो। साथ ही प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों से शिक्षण कार्य के अतिरिक्त कोई अन्य शासकीय कार्य न कराया जाए जिससे शिक्षण कार्य में बाधा न आए।
- नवीन पंचायती राज अधिनियम के तहत पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं को महत्वपूर्ण जिम्मेदारियां सौंपी गई हैं। महिलाएं इन जिम्मेदारियों को तभी ठीक से निभा सकती हैं जब वे पर्याप्त प्रबुद्ध तथा शिक्षित हों, इसलिए महिला साक्षरता वर्तमान परिस्थितियों में और भी प्रासंगिक हो गई है।

इस प्रकार देखा जाए तो भारत में महिलाओं ने समान संवैधानिक अधिकार तो प्राप्त कर लिए हैं, लेकिन व्यावहारिक तौर पर देश के अनेक भागों में महिलाएं उनका उचित उपयोग नहीं कर पा रही हैं महिला अशिक्षा इस क्षेत्र में एक बड़ी बाधा है। यदि महिलाएं पर्याप्त साक्षर तथा प्रबुद्ध होती हैं, तो वे अपने अधिकारों का सदुपयोग बेहतर ढंग से कर सकती हैं तथा भारतीय समाज को एक नवीन दिशा भी प्रदान कर सकती है। अतः वर्तमान में इस बात की सख्त आवश्यकता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति के प्रारूप में उल्लेखित समानता, स्वतंत्रता एवं न्याय के लिए महिला शिक्षा को एक व्यापक आंदोलन का स्वरूप दिया जाए। भारत के हिंदी भाषी क्षेत्र के लिए राज्यों को इस दिशा में गंभीर कदम उठाते हुए उन पर ईमानदारी से अमल करना होगा। तभी भारत में एक उन्नत, सामाजिक तथा मजबूत आर्थिक परिवर्तन की आशा की जा सकती है। ❑

(लेखक एस.जे.बी. कालेज ऑफ लॉ, छाता, मथुरा में अर्थशास्त्र के प्रवक्ता हैं)

उत्तरांचल में महिला साक्षरता

प्रो. रामानंद गैरोला

2001 की जनगणना के अनुसार साक्षरता की दृष्टि से उत्तरांचल राज्य की कुल जनसंख्या का 72.28 भाग साक्षर है। कुल साक्षरता को यदि पुरुष और महिला के वर्गों में पृथक-पृथक करके देखा जाए तो पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत 84.1 प्रतिशत है जबकि महिला साक्षरता पुरुषों की अपेक्षा कम 60.25 प्रतिशत है। भारतीय औसत को ध्यान में रखते हुए विश्लेषण किया जाए तो उत्तरांचल में साक्षरता का स्तर संपूर्ण भारतीय स्तर से 6.9 प्रतिशत अधिक है।

मानवीय व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में शिक्षा की अहम भूमिका होती है। शिक्षा से न केवल मनुष्य का बौद्धिक विकास होता है वरन् इसके द्वारा मानवीय व्यक्तित्व में अनेक उत्कृष्ट गुणों का भी यथोचित विकास होता है। एक शिक्षित व्यक्ति समाज को विशिष्ट सेवाएं प्रदान कर सकता है। शिक्षा व्यक्ति में ऐसी समझ एवं सामर्थ्य उत्पन्न करती है, जिसके माध्यम से व्यक्ति अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं का उचित प्रकार से उपयोग करके स्वयं एवं समाज का कल्याण कर सकता है। यही कारण है कि साक्षरता के उपयोग अथवा शैक्षिक विकास को किसी समाज के विकास का एक महत्वपूर्ण आधार माना जाता है।

जहां तक ग्रामीण विकास में शिक्षा के योगदान का प्रश्न है, निःसंदेह ग्रामीण विकास में शिक्षा के प्रसार को एक वरदान माना जा सकता है। क्योंकि शिक्षा से ग्रामीण परिवेश में परिवर्तन लाया जा सकता है और इसके माध्यम से ग्रामीण क्षेत्र में कार्य करने के परंपरागत तरीकों को आधुनिक रूप दिया जा सकता है।

शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त आधार है। सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों एवं अज्ञानता को दूर करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षा से व्यक्ति में वांछित विवेक एवं समझ पैदा होती है। शिक्षा के द्वारा व्यक्ति को अपने, मानवीय एवं नागरिक अधिकार तथा कर्त्तव्यों का बोध होता है। शिक्षा के इसी महत्व के कारण राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने शिक्षा को 'चेतना के विकास और समाज के पुनर्निर्माण' का बुनियादी आधार माना था।

1947 में देश की स्वतंत्रता के समय भारत में साक्षरता का स्तर अत्यधिक असंतोषजनक था। देश की मात्र 15 प्रतिशत जनता ही पढ़ना–लिखना, जानती थी। भारत के संविधान निर्माता इस तथ्य से भली–भांति परिचित थे कि साक्षरता का प्रसार किए बिना भारत का राष्ट्रीय विकास संभव नहीं है। इसीलिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 45 में यह प्रावधान रखा गया कि 'संविधान लागू होने के 10 वर्षों के भीतर शासन सभी बच्चों को 14 वर्ष की आयु पूरी करने तक निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा।' किंतु स्वतंत्रता के पश्चात अनेकानेक प्रयासों के बावजूद देश के 14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों को शिक्षा उपलब्ध कराने का जो संवैधानिक निर्देश जारी हुआ था, वह अभी तक पूरा नहीं हो पाया है। यह सही है कि भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से विस्तृत तथा विविधता वाले इस देश में स्वतंत्रता के बाद के 10 वर्षों की अल्प अवधि में यह लक्ष्य पूरा कर पाना निःसंदेह एक कठिन कार्य था। लेकिन स्वतंत्रता के बाद के 57 वर्षों में साक्षरता के क्षेत्र में जो प्रगति होनी चाहिए थी, वह नहीं हो पाई, यह एक शोचनीय स्थिति अवश्य है। इसके बावजूद यह आशा की जा सकती है कि 93वें संविधान संशोधन में शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने का जो प्रावधान रखा गया है, उससे साक्षरता के अभियान को और अधिक तीव्रता और गति प्राप्त होगी। जहां तक महिला साक्षरता का प्रश्न है, राष्ट्रीय स्तर पर पुरुषों की अपेक्षा महिला साक्षरता का प्रतिशत काफी न्यून है। लगभग यही स्थिति राज्य स्तर पर विभिन्न राज्यों में भी देखने को मिलती है।

उत्तरांचल में महिला साक्षरता पर एक दृष्टि

2001 की जनगणना के अनुसार साक्षरता की दृष्टि से उत्तरांचल राज्य की कुल जनसंख्या का 72.28 भाग साक्षर है। कुल साक्षरता को यदि पुरुष और महिला के वर्गों में पृथक–पृथक करके देखा जाए तो पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत 84.1 है, जबकि महिला साक्षरता पुरुषों की अपेक्षा कम 60.26 प्रतिशत है।

भारतीय औसत को ध्यान में रखते हुए विश्लेषण किया जाए तो उत्तरांचल में साक्षरता का स्तर संपूर्ण भारतीय स्तर से 6.9 प्रतिशत अधिक है। (संपूर्ण भारत का साक्षरता प्रतिशत 65.38 है, जबकि उत्तरांचल का 72.28 प्रतिशत है) इसी प्रकार उत्तरांचल में पुरुष तथा महिला साक्षरता का स्तर संपूर्ण भारतीय साक्षरता के स्तर से अधिक है। (उत्तरांचल में पुरुष साक्षरता का प्रतिशत 84.01 तथा महिला साक्षरता का प्रतिशत 60.26 है, जबकि भारत में पुरुष तथा महिला साक्षरता प्रतिशत क्रमशः 75.85 एवं 54.16 है।) इस प्रकार उत्तरांचल में पुरुष तथा महिला साक्षरता का प्रतिशत भारतीय पुरुष तथा महिला साक्षरता के प्रतिशत से क्रमशः 8.15 एवं 6.10 प्रतिशत अधिक है।

2001 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार कुल साक्षरता की दृष्टि से हिमालयी राज्यों में हिमाचल प्रदेश, मिजोरम, त्रिपुरा आदि राज्यों का साक्षरता का प्रतिशत उत्तरांचल से अधिक है, जबकि महिला साक्षरता की दृष्टि से हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, नगालैंड, मिजोरम, त्रिपुरा, मेघालय आदि राज्य उत्तरांचल से

आगे हैं।

उपर्युक्त तालिकाओं का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि कुल साक्षरता की दृष्टि से उत्तरांचल की गणना हिमालय के उच्चतम साक्षर राज्यों में की जा सकती है। परंतु महिला साक्षरता की दृष्टि से उत्तरांचल की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। क्योंकि आज भी इस राज्य की 40 प्रतिशत महिलाएं अशिक्षित हैं।

चमोली, देहरादून, पौड़ी, पिथौरागढ़ एवं नैनीताल जनपद साक्षरता की दृष्टि से अग्रगण्य हैं, लेकिन कुछ जनपद साक्षरता की दृष्टि से अभी बहुत पिछड़े हुए हैं, ऐसे जनपदों में हरिद्वार, उत्तरकाशी, टिहरी, ऊधमसिंह नगर आदि जनपद प्रमुख हैं। क्योंकि इन जनपदों में 70 प्रतिशत जनता भी अभी तक शिक्षित नहीं हो पाई है।

महिला साक्षरता की दृष्टि से उत्तरकाशी तथा टिहरी दोनों जनपद अभी बहुत अधिक पिछड़े हुए हैं। क्योंकि इन जनपदों की 50 प्रतिशत महिलाएं अभी तक अशिक्षित हैं। इन दोनों जनपदों में पुरुषों की साक्षरता की स्थिति काफी बेहतर है। लेकिन महिला साक्षरता काफी न्यून होने के कारण कुल साक्षरता की दृष्टि से ये जनपद उत्तरांचल के बहुत पिछड़े हुए जनपदों में आते हैं। हरिद्वार जनपद में 50 प्रतिशत से अधिक महिलाएं साक्षर हैं, परंतु हरिद्वार जनपद में पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत अन्य जनपदों के पुरुष साक्षरता के प्रतिशत से अपेक्षाकृत न्यून होने के कारण हरिद्वार का कुल साक्षरता का प्रतिशत उत्तरांचल के अन्य जनपदों से न्यून हो गया है और इसी आधार पर हरिद्वार को उत्तरांचल का शैक्षिक दृष्टि से सबसे अधिक पिछड़ा हुआ जनपद माना जाता है।

कुल मिलाकर देखा जाए तो उत्तरांचल के विभिन्न जनपदों में पुरुष तथा महिला साक्षरता में काफी अंतर देखने को मिलता है। विभिन्न जनपदों में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की साक्षरता का प्रतिशत काफी न्यून है। राष्ट्रीय साक्षरता के स्तर से तुलना करने पर उत्तरांचल से ही पुरुष तथा महिला साक्षरता का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्थिति संतोषजनक प्रतीत नहीं होती।

तालिका–1

साक्षरता की दृष्टि से हिमालयी राज्यों की तुलनात्मक स्थिति

क्र.	हिमालयी राज्य	साक्षरता दर		कुल साक्षरता
		पुरुष प्रतिशत	महिला प्रतिशत	का प्रतिशत
1.	जम्मू–काश्मीर	65.75	41.82	54.46
2.	हिमाचल प्रदेश	86.02	68.08	77.13
3.	सिक्किम	78.73	61.46	69.68
4.	अरुणाचल प्रदेश	64.07	44.24	54.74
5.	नगालैंड	71.79	61.92	67.11
6.	मणिपुर	77.87	59.70	68.87
7.	मिजोरम	90.59	86.13	88.49
8.	त्रिपुरा	81.47	65.41	73.66
9.	मेघालय	68.14	60.41	63.31
10.	असम	71.93	58.03	64.28
11.	उत्तरांचल	84.01	60.26	72.28

तालिका–2

2001 की जनगणनानुसार उत्तरांचल राज्य में जनपदवार महिला साक्षरता का प्रतिशत

क्र.	हिमालयी राज्य	साक्षरता का प्रतिशत		योग
		पुरुष प्रतिशत	महिला प्रतिशत	
1.	उत्तरकाशी	84.52	47.48	66.58
2.	चमोली गढ़वाल	89.89	63.00	76.23
3.	रुद्रप्रयाग	90.73	59.98	74.23
4.	टिहरी गढ़वाल	85.62	49.76	67.04
5.	देहरादून	85.87	71.22	78.96
6.	पौड़ी गढ़वाल	91.47	66.14	77.99
7.	पिथौरागढ़	90.57	63.14	76.48
8.	चम्पावत	88.13	54.75	71.11
9.	अल्मोड़ा	98.15	61.43	74.53
10.	बागेश्वर	88.56	57.45	71.94
11.	नैनीताल	87.39	70.98	79.60
12.	ऊधमसिंह नगर	76.20	54.16	65.63
13.	हरिद्वार	75.06	52.60	64.60
	योग उत्तरांचल	84.01	60.26	72.28

उत्तरांचल में महिला साक्षरता की प्रमुख बाधाएं

उत्तरांचल में महिला साक्षरता के मार्ग में अनेक ऐसी बाधाएं रही हैं जिनके कारण महिला साक्षरता की दिशा में अभी तक यथोचित प्रगति नहीं हो पाई है। ऐसी कुछ प्रमुख बाधाएं निम्न प्रकार हैं –

- उत्तरांचल में महिला साक्षरता के मार्ग में एक प्रमुख बाधा परंपरागत रूढ़िवादी सोच अथवा सामाजिक रूढ़ियों को माना जा सकता है। इसके कारण ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया। फलतः ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा उपेक्षित रही और महिलाओं में साक्षरता का समुचित प्रसार नहीं हो पाया।
- उत्तरांचल के ग्रामीण इलाकों से पुरुषों के उत्तरोत्तर बढ़ते पलायन का महिलाओं की साक्षरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। वर्षों से रोजगार की तलाश में अथवा आर्थिक कारणों से पर्वतीय ग्रामीण आंचलों से पुरुषों का शहरों की ओर भारी संख्या में पलायन

होता रहा है। पुरुषों के पलायन के कारण आज अनेक गांवों में केवल महिलाएं ही नजर आती हैं, जिन्हें आए दिन अनेक कठिनाइयों से जूझना पड़ता है। पुरुषों के पलायन के कारण महिलाओं को एक ही साथ दो महत्वपूर्ण दायित्वों को निभाना पड़ता है। एक ओर उन्हें घर–गृहस्थी संभालनी पड़ती है और दूसरी ओर पारिवारिक भरण–पोषण हेतु खेती, ईंधन और पशुओं के लिए चारा आदि की भी व्यवस्था करनी पड़ती है। उत्तरांचल के ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएं प्रतिदिन औसतन 14 से 18 घंटे तक कठोर परिश्रम करके अपने दैनिक दायित्वों को पूरा करती हैं। इस प्रकार के परिवेश में जीवनयापन करने के लिए बालिकाएं भी बचपन से अभ्यस्त होने लगती हैं। परिवार की बड़ी–बुजुर्ग महिलाओं के दिन–प्रतिदिन के घरेलू कार्यों में बालिकाएं बचपन से ही हाथ बंटाने लगती हैं, जिससे उनकी स्कूली शिक्षा की उपेक्षा होने लगती है और कई बालिकाओं का तो धीरे–धीरे स्कूल जाना ही छूट जाता है।

- आर्थिक पिछड़ापन अथवा निर्धनता संपूर्ण देश में ही साक्षरता के मार्ग की एक बड़ी बाधा है और उत्तरांचल भी इसका अपवाद नहीं है। उत्तरांचल के ग्रामीण क्षेत्रों के अनेक लोग आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। कई परिवार गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन करने के लिए मजबूर हैं तथा अपने बच्चों की शिक्षा–दीक्षा का प्रबंध करने में असमर्थ हैं। यही कारण है कि कई निर्धन परिवार किसी तरह अपने लड़कों को तो स्कूल में प्रवेश दिला देते हैं अथवा लड़कों की शिक्षा की व्यवस्था तो कर देते हैं, लेकिन निर्धनता के कारण बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान नहीं देते।
- स्वतंत्रता के बाद उत्तरांचल में महिला साक्षरता को प्रोत्साहन देने के लिए सरकारी स्तर पर कुछ महत्वपूर्ण प्रयास अवश्य किए गए। लेकिन ये प्रयास अधिकांशतः स्कूल–कालेज खोलने तक ही सीमित रहे हैं। जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा के प्रसार के लिए जो प्रेरणास्पद सामाजिक माहौल निर्मित किया जाना चाहिए था, वह सृजित नहीं किया गया। फलतः विद्यालयों में प्रारम्भ से ही बालकों की अपेक्षा बालिकाओं के प्रवेश कम होते रहे और जिन बालिकाओं ने प्रवेश लिया था, उनमें से अनेक ने प्राथमिक अथवा प्रारंभिक शिक्षा पूर्ण करने से पूर्व ही घरेलू अथवा अन्य कारणों से स्कूल जाना छोड़ दिया। वर्षों से यही स्थिति विद्यमान रही है और इसका महिला साक्षरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।
- उत्तरांचल क्षेत्र के विभिन्न विद्यालयों में अध्यापकों की कमी की शिकायतें भी आए दिन सुनने को मिलती हैं। कई विद्यालयों में छात्र संख्या अथवा कक्षाओं की संख्या के अनुपात में अध्यापक नियुक्त नहीं किए गए हैं। शहरी क्षेत्र के निकटवर्ती स्थानों के विद्यालयों में आवश्यकता से अधिक अध्यापक कार्यरत हैं, परंतु सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में मात्र एक या दो अध्यापक नियुक्त किए गए हैं। ऐसे विद्यालयों में जहां केवल एक या दो अध्यापक नियुक्त किए गए हैं, जब अध्यापक अवकाश पर होते हैं, तो विद्यालय बंद हो जाता है। विद्यालय के इस प्रकार असमय बंद होने का बच्चों के अध्ययन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इससे बच्चों की न केवल स्कूल जाने की आदत छूटती है, बल्कि वे अध्ययन से भी विमुख होने लगते हैं। इस प्रकार की स्थितियों के कारण कई बच्चे धीरे–धीरे स्कूल जाना पूर्णतः छोड़ देते हैं। ऐसे स्कूल छोड़ने वाले बच्चों में बालकों की अपेक्षा बालिकाओं की संख्या अधिक होती है।
- शिक्षा के प्रभावी प्रसार में संसाधनों का अपना विशेष महत्व होता है। उत्तरांचल के ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांशतः ऐसे विद्यालय हैं, जिनके पास संसाधनों का नितांत अभाव है। कई विद्यालयों के पास पर्याप्त भवन नहीं हैं अथवा भवन हैं भी तो अत्यधिक जीर्ण–शीर्ण अवस्था में हैं। अनेक विद्यालयों के पास खेल–कूद के लिए क्रीड़ा के मैदान नहीं हैं। कई विद्यालयों में पर्याप्त ब्लैक बोर्ड, टाट–पट्टी, खड़िया–झाड़न, क्रीड़ा उपकरण आदि उपलब्ध नहीं हैं। इन प्राथमिक सुविधाओं के अभाव के कारण बुनियादी शिक्षा का आधार चरमराना स्वाभाविक है। इससे स्पष्ट है कि सरकार ने दूर–दराज तक विद्यालय खोलकर प्राथमिक शिक्षा के द्वार तो खोल दिए हैं, लेकिन विद्यालयों के लिए बुनियादी संसाधनों को जुटाया जाना अभी शेष है।

उपर्युक्त बुनियादी और आधारभूत बाधाओं के कारण उत्तरांचल में महिला साक्षरता का स्तर वह उच्चता को प्राप्त नहीं कर पाया है, जो कि वांछनीय है।

महिला साक्षरता की बाधाओं के निराकरण हेतु सुझाव

उत्तरांचल में महिला साक्षरता की उपर्युक्त बाधाओं के निराकरण एवं साक्षरता के पूर्ण प्रसार हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तावित किए जा सकते हैं –

- उत्तरांचल में महिला साक्षरता के व्यापक प्रसार हेतु सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता इस बात की है कि क्षेत्रीय समाज में विशेष रूप से ग्रामीण समाज में जागरूकता का समुचित प्रसार किया जाए, ताकि ग्रामीण परिवेश में रहने वाले लोग महिला शिक्षा के महत्व को समझ सकें और महिला शिक्षा का विस्तार हो सके।
- उत्तरांचल के ग्रामीण समाज में चेतना का प्रसार करने एवं महिला साक्षरता को व्यापक बनाने में स्थानीय समाजसेवी एवं स्वयंसेवी संस्थाएं प्रभावशाली भूमिका निभा सकती हैं। इस दिशा में कई संस्थाएं कार्यरत भी हैं। परंतु ये स्वयंसेवी संस्थाएं तभी इस दिशा में और अधिक प्रभावशाली योगदान दे सकती हैं, जबकि वे कार्यक्रम को प्राथमिकता प्रदान करके निष्ठा से इसके संचालन के लिए अपनी सेवाए अर्पित करें।
- साक्षरता के प्रसार के लिए सरकारी स्तर पर जो प्रयास किए जाते रहे हैं, निःसंदेह उससे प्राथमिक शिक्षा के अभियान को गति मिली है। लेकिन यथार्थ में ये कार्यक्रम तभी सफल माने जा सकते हैं, जबकि यह सुनिश्चित किया जाए कि प्रत्येक गांव में प्रत्येक बालिका को शिक्षा प्राप्ति के अधिकार का लाभ मिल सके।
- महिला साक्षरता के प्रसार में ग्रामीण क्षेत्र की शिक्षित महिलाएं अपनी विशेष योगदान दे सकती हैं। वे ग्रामीण महिलाओं की बालिकाओं की शिक्षा हेतु प्रेरित कर सकती हैं। परंतु यह तभी संभव है, जबकि क्षेत्र की शिक्षित महिलाएं इस कार्य में स्वेच्छा

से अपना दायित्व निभाएं।

- महिला साक्षरता के मार्ग में निःसंदेह एक बहुत बड़ी बाधा क्षेत्रवासियों के आर्थिक पिछड़ेपन और निर्धनता की है। अतः क्षेत्रीय जनता के आर्थिक विकास एवं पिछड़ेपन को दूर करने के लिये ठोस एवं कारगर कदम उठाये जाने चाहिए तथा रोजगार के पर्याप्त नए अवसर भी सृजित किए जाने चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्र की शिक्षण संस्थाओं अथवा विद्यालयों में संसाधनों की पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए। इस दृष्टि से न केवल विद्यालयों में अध्यापकों की कमी को दूर किया जाना चाहिए बल्कि स्कूल के लिए भवन, ब्लैक बोर्ड, फर्नीचर, टाट–पट्टी जैसी न्यूनतम एवं अनिवार्य साधनों की भी व्यवस्था की जानी चाहिए। इस दृष्टि से यह भी आवश्यक है कि विद्यालयों में बच्चों की संख्या एवं कक्षा के अनुपात के स्तरीय मानक को ध्यान में रखते हुए अध्यापकों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
- महिला शिक्षा के प्रसार के लिए यदि गांव–गांव में महिला समितियों का गठन करके उन्हें बालिकाओं की शिक्षा सुनिश्चित करने का दायित्व सौंपा जाए तो इससे भी महिला साक्षरता के अभियान को कुछ गति प्राप्त हो सकती है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसी स्थानीय ग्रामीण सुशिक्षित एवं प्रशिक्षित महिला शिक्षिकाओं की नियुक्ति को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जो कि ग्रामीण क्षेत्रों में सेवा के लिये तत्पर हों अथवा जो स्पष्ट रूप से यह आश्वासन देने के लिए तैयार हों कि चयनित होने के बाद शहरी क्षेत्रों अथवा सुविधाजनक स्थानों में नियुक्ति अथवा स्थानांतरण के लिए प्रयास नहीं करेंगी। क्योंकि नियुक्ति के समय अधिकांश लोग ग्रामीण विद्यालयों को कार्यभार ग्रहण कर लेते हैं, लेकिन कालांतर में उच्च स्तरीय सिफारिश अथवा राजनीतिक दबाव द्वारा सुविधाजनक विद्यालयों में अपना स्थानांतरण करवा लेते हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्र में शैक्षिक उन्नयन के कार्यक्रम को गंभीर धक्का पहुंचता है।

निष्कर्ष

उत्तरांचल की अर्थव्यवस्था में महिलाओं का अत्यधिक महत्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय योगदान है। वस्तुतः उत्तरांचल की महिलाएं ही इस पर्वतीय क्षेत्र की अर्थव्यवस्था की मेरुदंड हैं। किंतु उत्तरांचल क्षेत्र में शिक्षा के क्षेत्र में अभी काफी पिछड़ापन और विषमता विद्यमान है। महिलाएं क्षेत्रीय सामाजिक–आर्थिक क्रियाकलापों में जितनी अधिक सक्रिय और व्यस्त रही हैं, उनका उतना शैक्षिक विकास नहीं हो पाया है। अतः साक्षरता एवं शिक्षा प्रसार के कार्य को और अधिक सशक्त आंदोलन बनाया जाना चाहिए और तभी उत्तरांचल में किसी महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की आशा की जा सकती है।

73वें एवं 74वें संविधान संशोधन द्वारा पंचायतीराज संस्थाओं में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी का मार्ग प्रशस्त हुआ है। परंतु महिलाएं इन वैधानिक दायित्वों का तभी भली प्रकार से निर्वाह कर सकती है, जबकि वे प्रबुद्ध तथा शिक्षित हों। इसके लिए महिला शिक्षा एवं साक्षरता को प्रोत्साहन दिए जाने की आवश्यकता है।

क्षेत्रीय जनमानस में साक्षरता के प्रति जागरूकता उत्पन्न करके महिला साक्षरता अभियान को लोकप्रिय, प्रभावी तथा गतिशील बनाया जा सकता है। परंतु यह तभी संभव है जबकि सरकारी प्रयासों के साथ–साथ जागरूकता अभियान में क्षेत्रीय प्रबुद्ध, जनमानस, प्रबुद्ध एवं शिक्षित महिलाएं, स्वयंसेवी संस्थाओं एवं जनप्रतिनिधि भी सक्रिय रूप से अपनी भागीदारी का निर्वाह करें। ❑

(लेखक हे.नं.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल) उत्तरांचल में राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर हैं)

कुरुक्षेत्र

हर बार की तरह इस बार भी कुरुक्षेत्र का अक्तूबर माह का अंक वार्षिकांक होगा। रंगीन चित्रों से सुसज्जित लगभग 72 पृष्ठों का होगा और एक प्रति का मूल्य केवल 15/- रुपये होगा।

इस बार का विषय है - सहकारिता नई दिशाएं और चुनौतियां। इस अंक में देश के जाने-माने लेखकों, विद्वानों और सहकारिता विशेषज्ञों के लेख शामिल हैं। अपनी प्रति आज ही अपने नजदीकी बुक स्टॉल से बुक कराएं अथवा इस पते पर संपर्क करें :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खण्ड-4, तल-7, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली-110066, दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

साक्षरता और छत्तीसगढ़

डा. कृष्ण कुमार शर्मा

शिक्षा विकास के नए-नए रास्ते सुझाती है। उत्तम और उचित शिक्षा द्वारा ही किसी देश का विकास होता है। शिक्षा से व्यक्ति को विशिष्ट ज्ञान मिलता है साथ ही सहिष्णुता, आत्मविश्वास, सामाजिक और नागरिक उत्तरदायित्व जैसे गुणों का विकास भी होता है। प्रस्तुत लेख में छत्तीसगढ़ में साक्षरता की स्थिति का आकलन किया गया है।

शिक्षा समाजीकरण, बदलाव और नवीनता लाने की प्रक्रिया है। जो राष्ट्र और सभ्यताएं शिक्षा पर जोर देते आई हैं, उन्होंने बौद्धिक और अर्थिक दोनों ही क्षेत्रों में उपलब्धि हासिल की है। यह बात प्रमाणित हो गया है कि हमारे भविष्य को आकार देने में शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण माध्यम हो सकता है। शिक्षा से समाज में नई प्रवृत्तियों को अपनाया जा सकेगा और इस तरह भावी पीढ़ियों को परिवर्तन के लिए तैयार किया जा सकेगा। निष्कर्षतः शिक्षा विकास की एक अनिवार्य शर्त है और साक्षरता शिक्षा की पहली सीढ़ी। इस तथ्य को बौद्धिक स्तर पर स्वीकार तो सभी करते हैं, मगर अनेक ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक कारणों से इसे मूर्त रूप नहीं दिया जा सका है। परिणामतः देश के लगभग अधिकांश लोग अभी भी निरक्षर हैं। इस प्रकार साक्षरता–यात्रा चरमराती, थकी–थकी सी चल रही है और देश अशिक्षा, गरीबी, बीमारी, बेरोजगारी का असहनीय बोझ ढोता हुआ परेशान है। यह तो देश की तस्वीर है, और देश की राष्ट्रीय औसत साक्षरता से पीछे है– छत्तीसगढ़ साक्षरता में यह राज्य देश में 23 वां स्थान प्राप्त है।

2001 की जनगणना के अनुसार 7 वर्ष के ऊपर निरक्षरों की संख्या छत्तीसगढ़ में 34.82 प्रतिशत है। यदि कहीं किसी कार्य के लिए दस्तखत करने की जरुरत हो तो अंगूठे को आगे बढ़ाना होगा और किसी को किसी काम के लिए पत्र लिखना है तो उन्हें दूसरे का मुंह ताकना होगा। कोई पत्र, नोटिस या खबर कहीं से आवे तो उन्हें दूसरे से पढ़वाना होगा।

चिंतनीय है कि विश्व सूचना–क्रांति के दौर से गुजर रहा है। विभिन्न क्षेत्र–कृषि, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा में नित नए–नए परिवर्तन हो रहे हैं। ऐसे समय में निरक्षरता से

उत्पन्न स्थिति क्या मान्य और उचित है?

जनतांत्रिक मूल्यों के प्रतिस्थापना और राष्ट्र के विकास की राह में निरक्षरता को एक बड़ी अड़चन मानते हुए संविधान के चौथे भाग के अनुच्छेद 45 में कहा गया है कि राज्य संविधान के लागू होने के बाद दस वर्षों में 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा दिलाने का प्रयास करेगा। आज पांच दशक बाद भी देश के बहुत से बच्चे शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित हैं। सुप्रीम कोर्ट के जुलाई 1992 के फैसले के अनुसार शिक्षा पाना एक नागरिक का मौलिक अधिकार है।

भारत की औसतन साक्षरता 1951 में 21.28 प्रतिशत थी और अभी 65.38 प्रतिशत है। छत्तीसगढ़ की साक्षरता का प्रतिशत सदैव राष्ट्रीय औसत साक्षरता से कम रहा है, यद्यपि यह वर्तमान में लगभग 65.18 प्रतिशत है जो राष्ट्रीय औसत साक्षरता के बराबर है। जबकि हिमाचल प्रदेश में 77.13 प्रतिशत, महाराष्ट्र में 77.27 प्रतिशत तमिलनाडू में 73.47 प्रतिशत और गुजरात में 69.97 प्रतिशत है। जो राज्य 1951 में आगे थे वे तो आगे हैं ही। केरल प्रारंभ से ही आगे रहा है। आज देश की जो औसत साक्षरता है, करीब–करीब वह 65.38 प्रतिशत जो केरल में 1961 में ही थी। तब से लगातार वृद्धि हुई है और 2001 में 90.92 प्रतिशत साक्षरता है।

छत्तीसगढ़ में महिलाओं की साक्षरता 1951 में 2.66 प्रतिशत थी जबकि बिहार जैसे राज्य में उस समय महिलाओं की साक्षरता 4.87 प्रतिशत थी। राज्य में स्त्रियों एवं पुरुष की साक्षरता दर का प्रतिशत इस प्रकार है–

इससे स्पष्ट होता है कि छत्तीसगढ़ में 1951 से लकर 2001 तक पुरुषों की साक्षरता स्त्रियों की साक्षरता प्रतिशत से सदैव अधिक रही है। सन 1951 में छत्तीसगढ़ की 9.41 प्रतिशत जनसंख्या साक्षर थी, जिसमें पुरुषों की साक्षरता 16.25 प्रतिशत थी जबकि महिलाओं की साक्षरता मात्र 2.66 प्रतिशत थी, जो पुरुषों की तुलना में लगभग आठ

गुना कम है। 2001 में संपूर्ण छत्तीसगढ़ की 65.18 प्रतिशत जनसंख्या साक्षर है जिसमें महिलाओं की साक्षरता प्रतिशत 52.40 प्रतिशत जो पुरुषों की तुलना में अभी भी काफी कम है।

2001 की जनगणना के अनुसार स्त्रियों में लगभग 49.12 लाख और पुरुषों में 23.17 लाख निरक्षर है। छत्तीसगढ़ की औसत साक्षरता देश में 1951 से लगातार पीछे रही है।

छत्तीसगढ़ में सबसे अधिक साक्षरता वाला जिला राजनांदगांव है तथा इसकी साक्षरता दर 77.58 प्रतिशत है। सबसे कम साक्षरता 16.46 प्रतिशत दंतेवाड़ा जिला की है। जनजाति बाहुल्य वाले सरगुजा और बस्तर जिलों साक्षरता प्रतिशत 27.34 प्रतिशत है। यह जनजाति कल्याण की दुहाई देने वाले संस्था व व्यक्तियों के लिए आश्चर्य ही नहीं, पीड़ा की बात है।

कुछ लोग प्रौढ़ शिक्षा के औचित्य पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं। उनकी मान्यता है कि लाखों रुपये व्यय करके जिनकी उम्र पच्चीस, तीस वर्ष की हो गई है, क्यों साक्षर बनाया जाए? देश का भविष्य बच्चों पर है, इसलिए इन्हें शिक्षित किया जाए, यह तो समझ में आता है, मगर जो आधी जिंदगी पार कर चुके हैं, उन पर क्यों इतना खर्च किया जाए? क्या करेंगे वे साक्षर बनकर। न इन्हें नौकरी मिलेगी और न ही देश के विकास में बहुमूल्य योगदान दे पाएंगे फिर उन्हें क्यों साक्षर बनाया जाए।

विडंबना है कि आज एक वर्ग ऐसा भी है जिसके विचार में शिक्षा को अनिवार्य बनाना अभी देश की प्राथमिकताओं में नहीं आना चाहिए। इसलिए जितना बल शिक्षा पर दिया जा रहा है, उनके विचार में उतना औचित्य नहीं है। यह कहना उपयुक्त होगा कि शिक्षा केवल ज्ञान एवं कौशल का व्यापार नहीं, बल्कि नैतिकता का बेजोड़ अभियान है।

विचारणीय तथ्य

किसी भी देश की सबसे बड़ी संपत्ति वहां की मानवीय पूंजी होती है। मानवीय पूंजी जितनी गुणात्मक स्तर की होगी, उसी अनुरूप देश सशक्त होगा। विकास के लिए अनेक वित्तीय साधन और प्राकृतिक संपदा पर्याप्त मात्रा में है, किंतु इसके विदोहन में मानवीय पूंजी का योग न हो तो विकास की कल्पना नहीं की जा सकती।

जीवन से संबंधित किसी कार्यकलाप को लें कृषि, बागवानी, पशुपालन, नौकरी, मजदूरी सभी कार्यों के लिए शिक्षित होना अनिवार्य हो गया है। उन्नत खेत के लिए नए बीज, खाद, कीटनाशक दवाएं, सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए। यदि कोई साक्षर नहीं है तो बीज, खाद एवं दवाइयों के बारे में जानने में मुश्किलें आएंगी। डेयरी, पशुपालन, सहकारी और अन्य संस्थाओं में कम से कम काम चलाउ जानकारी चाहिए। साक्षरता के बिना इतना भी ज्ञान संभव नहीं है।

खेती, उद्योग, व्यापार सभी कार्यों में आज बैंकों और संबंधित विभिन्न संस्थाओं में प्रतिदिन काम पड़ता है। बहुत सारे फार्मों को भरना पड़ता है। यदि अक्षर ज्ञान नहीं है, तो दूसरे साक्षर व्यक्ति का सहारा लेना पड़ सकता है।

अतएव, यह विचार कि उम्र बढ़ जाने पर पढ़ाई से कोई लाभ नहीं है, आज की बदलती हुई परिस्थितियों में उचित नहीं है और परिस्थितियां दिन प्रतिदिन बदल रही है। इस पृष्ठभूमि में साक्षरता एक सामान्य जीवन जीने के लिए आवश्यक नहीं अपितु अनिवार्य हो गई है।

सफलता के कारक

विकसित देशों की उन्नति के कारणों का विश्लेषण करें तो यह तथ्य सामने आएगा कि उनकी उन्नति का प्रमुख कारण संपूर्ण साक्षरता व शिक्षा पर निवेश अधिक होना है। विकसित देशों में साक्षरता 95 प्रतिशत से भी अधिक होती है तथा बजट का बड़ा हिस्सा शिक्षा पर व्यय किया जाता है।

हम जानते हैं कि शिक्षा और विकास एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इन्हें एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। शिक्षा के माध्यम से आधुनिकीकरण और विकास के लिए वांछित परिवर्तनों को लाया जा सकता है। अशिक्षा और दरिद्रता में निकट का संबंध है। जो गरीब हैं वे अशिक्षित हैं जो अशिक्षित है वे गरीब हैं। जो उन्नत और उन्नतशील देश हैं– वहां लगभग पूर्ण साक्षरता है अतएव, प्रश्न यह नहीं है कि साक्षरता हो या नहीं, अपितु यह कि किस रूप में और कैसे जल्द प्राप्त की जाए।

समस्या के स्वरूप को देखते हुए कि अभी भी 34.82 प्रतिशत जनसंख्या निरक्षर है,उन्हें ही साक्षर बनाने में बहुत समय लग जाएगा। इसी बीच और न जाने कितने लोग निरक्षर हो जाएंगे क्योंकि 6–14 आयु के भी तो सभी पढ़ नहीं रहे हैं। 6 –11 वर्ष की उम्र के बच्चों का नामांकन तो शत–प्रतिशत है, किंतु सभी लोगों को पता है कि जितने नामांकित बच्चे होते हैं, वे सभी पढ़ते नहीं है। कुछ दिन जाकर छोड़ देते हैं। उपलब्ध आकड़ों से ज्ञात होता है कि लगभग 50 प्रतिशत पढ़ाई छोड़ देते हैं। संपूर्ण साक्षरता की समस्या कितनी बड़ी और उलझी है, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। इस समस्या पर ध्यान न दे तो निरक्षरता बढ़ती जाएगी, और इसका असर सबके जीवन पर पड़ेगा और राज्य विकास की हर क्षेत्र में पिछड़ा रहेगा।

साक्षरता नींव है – अच्छे जीवन की – और कोई सरकार इससे मुंह नहीं मोड़ सकती। सरकार को निश्चय ही नेतृत्व देना है और अहम भूमिका निभानी है। मगर सरकार पर ही पूरी जिम्मेदारी छोड़ देना, समस्या से मुंह मोड़ लेना है। पूरी शक्ति और पूरे उत्साह से निरक्षरता की समस्या हल करने की जरूरत है। ऐसी परिस्थिति में समाज के अग्रणी और पढ़े–लिखे लोगों का विशेष दायित्व बनता है कि वे आगे बढ़ें और भूमिका निभाएं।

छत्तीसगढ़ मूलतः कृषि पर आधारित ग्रामीण अर्थव्यवस्था है। छत्तीसगढ़ की 80 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। जो पढ़े–लिखे लोग हैं– विशेषतः स्कूल और महाविद्यालय के विद्यार्थी और शिक्षक, सेवानिवृत्त, व्यक्ति,गांव की पढ़ी–लिखी स्त्रियां आदि वे इस पुनीत कार्य को लें और कार्यक्रम के अनुसार निरक्षर लोगों को साक्षर बनाने का कार्य करें। यह उनका सामाजिक दायित्व है और राष्ट्रीय हित में भी है।

वयस्क शिक्षा के लिए सरकार ने कई कार्यक्रम चलाए हैं। साक्षरता के प्रति गांव के निरक्षर लोगों में उत्साह है। आवश्यकता केवल जागरूकता लाने की है। वयस्क शिक्षा में लगे लोगों और सरकार को प्रभावी भूमिका निभानी होगी। यदि स्त्रियां इसका लाभ उठाती हैं तो परिवार साक्षर, शिक्षित हो जाएगा और सामाजिक परिवेश ही बदल जाएगा।

अंत में यह कहना उचित होगा कि विकास के लिए साक्षरता आवश्यक है, का बोध तो सबको है, किंतु प्रयास बोध भी उससे कही अधिक होना चाहिए। मगर यह निर्भर करेगा– छत्तीसगढ़ प्रशासन तंत्र और वहां के लोगों पर, शिक्षकों और विद्यार्थी पर, पढ़े–लिखे युवक और युवतियों पर। आने वाला समय ही बताएगा कि नवोदित छत्तीसगढ़ राज्य इस चुनौती पर कितना खरा उतरता है। ❑

(लेखक डी.पी. विप्र स्नात. महा, बिलासपुर छत्तीसगढ़ में अर्थशास्त्र के सहा. प्राध्यापक हैं)

राजस्थान में साक्षरता

डा. श्याम मनोहर व्यास

जीवन को सुसंस्कारित एवं विवेकशील बनाने के लिए शिक्षा का बड़ा महत्व है। साक्षरता का भी उद्देश्य निरक्षरों को सुसंस्कृत नागरिक बनाकर उन्हें सामाजिक और आर्थिक शोषण से मुक्त करना है।

हर साक्षर व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह निरक्षर स्त्री–पुरुषों को साक्षर करे। राजस्थान के हर जिले में सरकारी अधिकारी, शिक्षक व कर्मचारी इस पुनीत काम में जुटे हैं।

लोगों में गरीबी उन्मूलन, राष्ट्रीय एकता, छूआछूत उन्मूलन, सांप्रदायिक सद्भाव, पर्यावरण संरक्षण, सांस्कृतिक चेतना, छोटे परिवार का महत्व, नारी सम्मान का उन्नयन आदि सामाजिक और आर्थिक मूल्यों का निर्माण करना भी है।

लोगों को लोकोत्सवों, मंचों एवं जन सभाओं में प्रदर्शनी, पोस्टर और सांस्कृतिक कार्यक्रमों से साक्षरता के महत्व से परिचित कराना चाहिए।

साक्षरता सामाजिक क्रांति का सूत्रपात है। स्वावलंबन का मार्ग है। नए आर्थिक युग का आधार है। जन जागरण व जन चेतना है। सांस्कृतिक क्रांति और आंदोलन है। राष्ट्रीय एकता एवं विकास का अभियान है। वैज्ञानिक अवधारणा की ओर बढ़ना है। सामाजिक कुरीतियों एवं अंधविश्वासों को दूर करना है। जीवन मूल्यों के प्रति सजगता है। लिंग भेद की भावना को दूर करना है।

किसी भी देश का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि वहां के लोग कितने जागरूक हैं। शिक्षा मनुष्य के सोच और आचरण में गुणात्मक परिवर्तन का माध्यम है। देश के लगभग 40 करोड़ निरक्षरों को साक्षर करना देश की पहली प्राथमिकता होनी चाहिए।

सच्ची शिक्षा वह है जिससे मनुष्य अपनी शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक भावनात्मक एवं आध्यात्मिक शक्तियों का भी विकास करे। जीवन में सही बदलाव लाना ही शिक्षा का मूल उद्देश्य है। साक्षरता सामाजिक व आर्थिक हितों को पोषित कर आगे बढ़ाती है।

राजस्थान के अलग–अलग जिलों में वहां के स्थानीय परिवेश के आधार पर ही पाठ्यक्रम बनाया गया है। प्रायः निरक्षरों को साक्षर करने के लिए तीन पुस्तकें लिखी गई हैं जिन्हें 'आखर विजय', 'आखर पोथी', आदि नाम दिए गए हैं जहां निरक्षर पढ़ने हेतु आते हैं उस स्थान विशेष को 'आखर धाम', 'आखर देवरा', 'आखरशाला', 'आखर चौपाल' आदि नामों से संबोधित किया जाता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार 'अक्षर' को ब्रह्मा का स्वरूप माना है। 'आखर देवरा' सरस्वती का पावन मंदिर ही है।

निरक्षरों को साक्षर बनाने के लिए प्रारंभ में स्वर तथा व्यंजन का ज्ञान औपचारिक रूप से नहीं दिया जाना चाहिए। निरक्षरों को किसी वस्तु विशेष यथा 'मकान', 'बादल', 'नदी' या 'आम' आदि का चित्र बनाकर इस शब्द को लिखना बताया जाता है। अक्षर ज्ञान देने वाला आखरदाता अपने शिक्षार्थियों से चित्र की विषयवस्तु पर विस्तार से चर्चा या बातचीत करे। चित्र पठन के पश्चात् पाठ का शीर्षक बड़े अक्षरों में बोर्ड पर लिखें। बोर्ड पर लिखने के पश्चात् वाक्य का एक साथ उच्चारण करें तथा अपने शिक्षार्थियों से भी अनुकरणीय उच्चारण करवाएं। इसके बाद शीर्षक वाक्य के प्रत्येक वर्ण का अलग–अलग उच्चारण करें तथा शिक्षार्थियों से भी ऐसा करने का अभ्यास करवाएं। तीनों पुस्तकों को 'प्रवेशिका' भाग एक, दो और तीन नाम दिए गए हैं। राजस्थान के चित्तौड़गढ़ जिले में 'आखर विजय' पुस्तकों को लिखवाने में इस लेखक की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। पुस्तक के प्रत्येक पाठ से दो या तीन वर्ण तथा एक या दो मात्राएं ही सिखाई जाती हैं।

भाषा के साथ अंकों का ज्ञान देना भी आवश्यक है। विषयवस्तु को सरल से सरल विधि तथा स्थानीय साधनों द्वारा समझाया जाना चाहिए।

एक साक्षर व्यक्ति को पत्र लिखना, पुस्तक पढ़ना, व उसे समझना तथा गणित के अंकों का ज्ञान, जोड़–बाकी, गुणा–भाग, ब्याज, अनुपात, औसत आदि का ज्ञान होना चाहिए ताकि जीवन में रोज आने वाली समस्याओं का वह समाधान कर सके। शिक्षक–शिक्षण को रोचक बनाने के लिए पहेली, गीत, बालगीत, चुटकुले, चित्रांकन, कठपुतली खेल, मॉडल आदि का भी अध्यापन में सहारा लें।

यह सत्य है कि आखर देवरों पर ग्रामीण जनरुचि लेकर पढ़ते हैं। इस कार्यक्रम में उम्र भी बाधा नहीं है। पारसोली (जि. चित्तौड़गढ़) ग्राम पंचायत के वार्ड नं. पांच के एक आखर देवरे पर जब लेखक पहुंचा तो एक साठ वर्षीय वृद्धा जानकीबाई दत्तचित होकर पढ़ रही थी। इसे कहते हैं पढ़ने की ललक।

आखर विजय की तीसरी प्रवेशिका पढ़ने पर निरक्षर व्यक्ति साक्षर मान लिया जाता था। तीसरी प्रवेशिका के पश्चात् व्यक्ति कोई भी हिंदी की पुस्तक पढ़ सकता है, पत्र लिख सकता है, अपने विचार लिपिबद्ध कर सकता है। साक्षर होने पर व्यक्तियों का समवर्ती मूल्यांकन भी किया जाना चाहिए। इसी मूल्यांकन से यह ज्ञात हो सकेगा कि साक्षरता का प्रतिशत कितना बढ़ा है।

साक्षरता के आंकड़े

राजस्थान में साक्षरता की दर 61.03 प्रतिशत रही। इसमें पुरुष की 76.46 प्रतिशत तथा महिला की 44.34 प्रतिशत थी।

राजस्थान में पुरुष व महिलाओं की साक्षरता में लगभग 32 प्रतिशत का अंतर है। नगरीय व ग्रामीण साक्षरता दर में 15 प्रतिशत का अंतर है। कई ग्रामीण क्षेत्रों में 90 प्रतिशत महिलाएं निरक्षर हैं जो शोचनीय विषय है।

आजादी के 57 वर्ष पश्चात् भी देश की मूलभूत कई समस्याएं ज्यों की त्यों हैं। यद्यपि भारत में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, उत्पादन आदि क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति हुई है पर महंगाई, जनसंख्या विस्फोट, निरक्षरता, बेरोजगारी आदि समस्यायें देश की प्रगति में बाधक हैं।

निरक्षरता का कलंक मिटने से ही देश का चहुमुखी प्रगति संभव है। मुख्यरूप से महिलाओं को साक्षर करना आवश्यक है। हर शिक्षित व्यक्ति का यह राष्ट्रीय कर्तव्य है कि साक्षरता अभियान में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाए। यह राष्ट्रीय कार्य है। ❑

(लेखक पूर्व प्राचार्य (डाइट) तथा जिला शिक्षा अधिकारी रहे हैं)

जनजातीय क्षेत्रों में बालिका-शिक्षा

रमेश नैयर

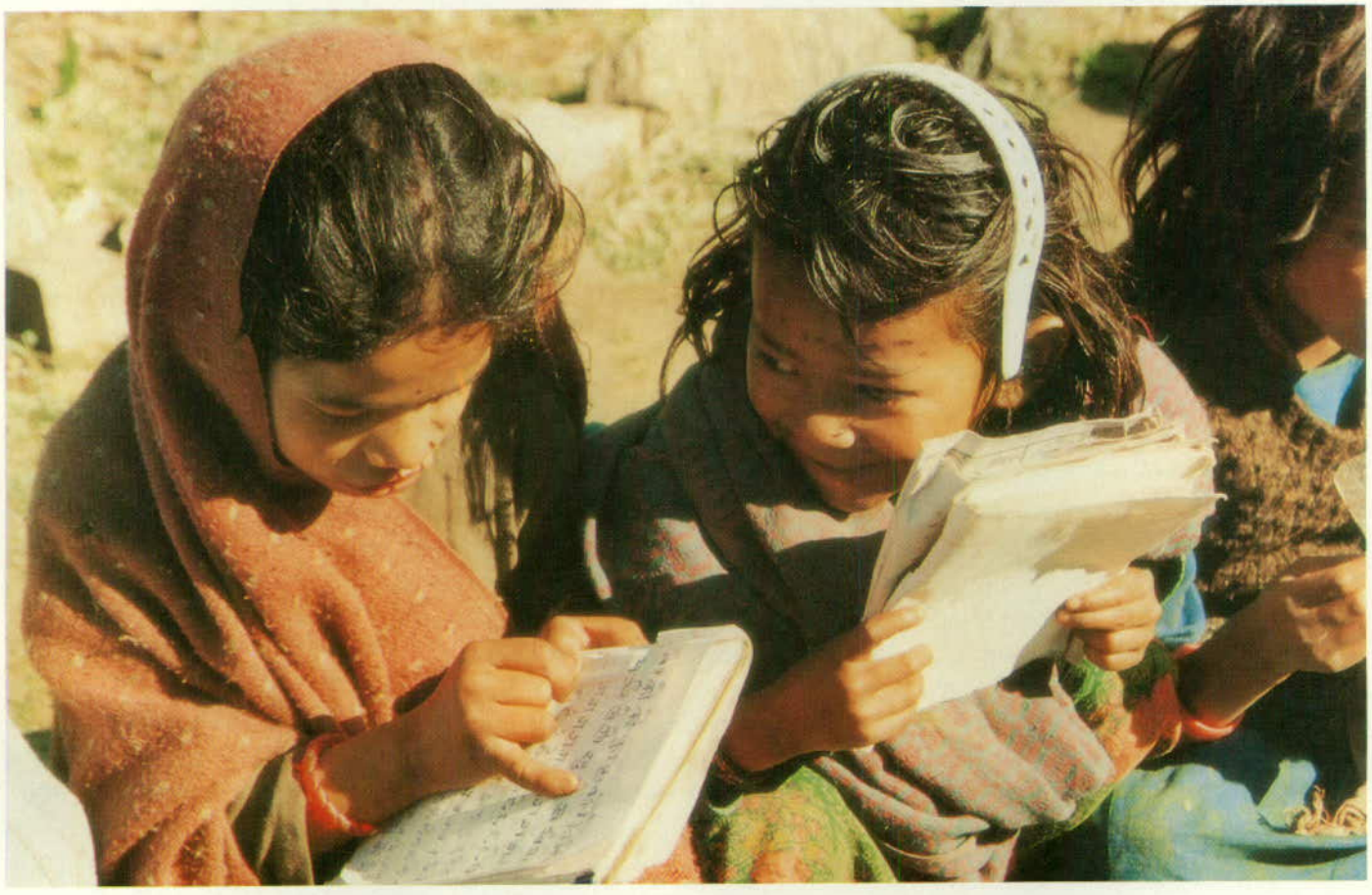

स्वाधीन भारत ने पिछले 57 वर्षों में शिक्षा के क्षेत्र में एक लंबा फासला तय किया है। इसका प्रमाण है देश में फैला शिक्षा व्यवस्था का विस्तृत ढांचा। भारत विश्व का ऐसा दूसरा देश है जहां विभिन्न सामाजिक– आर्थिक–सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों के 20 करोड़ से अधिक विद्यार्थियों के लिए शिक्षा की व्यवस्था गतिशील है। फिर भी हमारे संविधान के नीति–निर्देशक तत्वों की एक कामना अभी तक अधूरी है।

संविधान के नीति–निर्देशक तत्व में कहा गया था– "संविधान के लागू होने के 10 वर्षों के भीतर राज्य 14 वर्षों की आयु तक के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का प्रयास करेगा।" आज संविधान के क्रियाशील होने के 54 वर्षों के बाद भी इस आयु वर्ग के सात–आठ करोड़ बच्चे शिक्षा से वंचित हैं। उनमें सर्वाधिक संख्या बालिकाओं की है। अशिक्षित बालिकाओं में सर्वाधिक संख्या उनकी है, जो जनजातीय–बहुल क्षेत्रों में रहती हैं।

साक्षरता को यदि शिक्षा माना जाए तो 1951 से 2004 तक उसका सुखद विस्तार हुआ है। 1951 में जहां मात्र 32 प्रतिशत लोग साक्षर थे, वहीं मोटे अनुमान के अनुसार अब लगभग 75 प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ जैसे पिछड़े कहे जाने वाले राज्यों में भी साक्षरता का प्रतिशत उत्साहवर्धक है। इन राज्यों के शहरी इलाकों में लगभग 78 प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। पुरुषों में साक्षरता दर 81 प्रतिशत और महिलाओं में 71.05 प्रतिशत आंकी गई है। यद्यपि महिलाओं में साक्षरता पिछले 52–53 वर्षों में सात गुना से अधिक बढ़ी है फिर भी वह 53 प्रतिशत से कम है, बावजूद इसके कि बालिकाओं की शिक्षा के लिए निरंतर अतिरिक्त प्रयास किए जाते रहे हैं। संतोष की बात यह है कि जनजातीय बहुल बस्तर संभाग के दंतेवाड़ा जिले में मात्र 20 प्रतिशत से भी अधिक कुछ महिलाएं साक्षरता की उजली

परिधि में लाई जा सकी है। वहां बालकों का साक्षरता प्रतिशत भी उत्साहवर्धक नहीं माना जा सकता है। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय नेतृत्व इसके प्रति सजग नहीं रहा। ऐसा भी नहीं कि उसके लिए उपयुक्त योजनाएं बनी नहीं।

आजादी के तत्काल बाद पंडित जवाहरलाल नेहरू ने बाल कल्याण के प्रति अपनी विशेष व्यग्रता के तहत बच्चों की शिक्षा को प्राथमिकता देने की बात बड़ी शिद्दत के साथ कही थी। पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने 1974 में बाल कल्याण के लिए एक राष्ट्रीय प्रारूप की पहल की थी। आठवें दशक के मध्य में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने संपूर्ण दक्षिण एशिया में बच्चों की स्थिति पर सार्थक चर्चा की पहल की थी, जिसकी परिणति 1986 में बाल कल्याण पर केंद्रित दक्षेस–यूनिसेफ संमेलन के रूप में हुई। अन्य प्रधानमंत्रियों ने भी इस दिशा में अपने–अपने ढंग से प्रयास किए।

जनजातीय क्षेत्रों में आज प्रायः प्रत्येक गांव में सरकारी अथवा स्वायत्त इकाइयों द्वारा संचालित स्कूल दिखाई देते हैं। बस्तर के अबूझमाण जैसे बीहड़ और विरल गांवों में भी शालाएं चल रही हैं। आदिवासी कल्याण विभाग द्वारा संचालित शालाओं के अलावा रामकृष्ण मिशन सहित अनेक समाजसेवी संगठन भी शिक्षा का विस्तार कर रहे हैं। बस्तर के दूरस्थ नारायणपुर से सटे अबूझमाड़ क्षेत्र में रामकृष्ण मिशन के अध्ययन केंद्र ने तो अनेक ऐसे विद्यार्थियों को तराशा, जिन्होंने अखिल भारतीय परीक्षाओं में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई। फिर भी अनेक आदिवासी गांवों के बच्चे स्कूलों तक पहुंच नहीं पाते। बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। बच्चियों की स्थिति तो और भी चिंतनीय है।

यक्ष प्रश्न यह है कि जनजातीय बच्चों, विशेषकर बालिकाओं में शिक्षा के प्रति अपेक्षित ललक पैदा क्यों नहीं की जा सकी? इसका उत्तर तलाशने के लिए हमें जनजातीय समाज के विशिष्ट सांस्कृतिक और कुछ हद तक उनके आर्थिक परिवेश के अंदर तक उतरना होगा। मुझे धुंधली–सी याद है प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू की लगभग साढ़े चार दशक पहले की जगदलपुर यात्रा की वह उस समय संभाग नहीं एक जिला था और जगदलपुर जिला मुख्यालय। नेहरूजी ने अन्य बातों के अलावा शिक्षा के मामले में भी जनजातियों के सामाजिक, सांस्कृति परिवेश तथा उनके रुझानों के अनुरूप शिक्षा प्रणाली विकसित करने पर जोर दिया था।

तब तक जनजातीय बच्चों और तरुणों के सबसे बड़े शिक्षा–केंद्र घोटुल वस्तुतः आदिवासी बच्चों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के ऐसे सशक्त केंद्र थे, जहां गीत–संगीत, नृत्य, शिल्प तथा आचार–व्यवहार की शिक्षा अत्यंत व्यावहारिक ढंग से दी जाती थी। शाम होते ही पांच वर्ष की आयु से अधिक के बालक और बालिकाएं बड़ी उमंग के साथ वहां पहुंच जातीं। वहां घोटुल की साफ–सफाई से लेकर आदिवासी समाज के लिए आवश्यक शिल्प तथा ललित–कलाओं का क्रमिक प्रशिक्षण उन्हें दिया जाता। ये घोटुल शिक्षाविहीन पाठशालाएं थीं। इसी आधार पर प्रसिद्ध मानव शास्त्री वेरियर एल्विन ने उन्हें आदिवासी समाज के सबसे बड़े विश्वविद्यालयों की संज्ञा दी थी। जितनी सहजता के साथ आदिवासी बाल–बालिकाएं उन घोटुलों में दीक्षित होतीं, उतनी सहजता अन्य किसी शाला में अब तक दिखाई नहीं दी है।

घोटुल की शिक्षा–दीक्षा में "ड्राप आउट" अपवादस्वरूप ही होता था। शैशव से लेकर दांपत्य–सूत्र में बंधने तक घोटुल की शिक्षा का शताब्दियों तक पीढ़ी–दर–पीढ़ी जो अविराम क्रम चलता रहा, वह अद्‌भुत था। देश के प्रायः सभी हिस्सों के आदिवासी समाजों में घोटुल जैसी रात्रिकालीन शिक्षण संस्थाएं विभिन्न नामों से गतिशील थीं। कथित आधुनिक–सभ्यता के आवेग ने उन आदिम शिक्षा केंद्रों को रफ्ता–रफ्ता ध्वस्त कर दिया और उनका कोई सार्थक विकल्प जनजातीय समाज को दे नहीं पाई। जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, उसकी दृष्टि में घोटुल जैसे केंद्र एक अजूबा थे। वे कौतुक का विषय हो सकते थे, परंतु उन्हें त्याज्य नहीं माना जाना चाहिए था, कम–से–कम तब तक, जब तक कि उनकी जनजातीय अभिरुचियों के अनुरूप विकल्प विकसित नहीं कर लिए जाते। जनजातीय समाजों में शिक्षा के प्रसार के अभीष्ट को प्राप्त न कर पाने का यह भी एक बड़ा कारण है।

समय की सुई को अब वापस तो नहीं घुमाया जा सकता। यह भी सही है कि रफ्ता–रफ्ता जनजातीय बालक–बालिकाओं को व्यापक राष्ट्रीय समाज में समरस करने की प्रक्रिया को रोका भी नहीं जा सकता। रोका जाना भी नहीं चाहिए। संचार तंत्र की दूरस्थ गांवों तक पहुंच ऐसा होने भी नहीं देगी। परंतु कुछ ऐसे उपाय अवश्य किए जाने चाहिए जो जनजातीय तरुणाई को, जिसमें बच्चियां भी सम्मिलित हैं, उस चिंताजनक भटकाव से रोकने में कारगर हो सकें। मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा और महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र के आदिवासी प्रमुख वन–क्षेत्रों में युवकों तथा युवतियों में हथियारों के प्रशिक्षण लेने की जो प्रवृत्ति पिछले एकाध दशक से विकसित हो रही है, उसे रोकने के लिए शालीय शिक्षा को भी माध्यम बनाया जा सकता है। इसके लिए जनजातीय बहुल क्षेत्रों में पदस्थ रहे संवेदनशील प्रशासनिक अधिकारियों के अनुभवों का लाभ उठाया जा सकता है।

इस तथ्य को ध्यान में रखना आवश्यक है कि जनजातीय समाज कम–से–कम एक बात में शहरी और कस्बाई क्षेत्रों के समाज से बहुत अलग है। वे उनकी तरह पुरुष–प्रधान नहीं हैं। वहां शैशवकाल से ही बालकों तथा बालिकाओं के बीच वैसा भेदभाव नहीं होता जो गैर–जनजातीय समाजों में प्रचलित है। आदिवासी क्षेत्रों से संचालित शालाओं में ऐसे ही शिक्षक पदस्थ होने चाहिए, जो उसी समाज में पढ़–लिखकर निकले हों।

जनजातीय क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा का अपेक्षित विस्तार न हो पाने के जो कारण हैं, उनका गंभीरता से परीक्षण–विश्लेषण किया जाना कोई सकारात्मक राह सुझा सकता है। बालिकाओं की शिक्षा के प्रति उपेक्षा के लिए उन कालातीत मूल्यों तथा रुझानों में परिवर्तन लाया जाना चाहिए। स्थानीय तौर पर कुछ क्षेत्रों में बच्चियों तथा बच्चों को खेल–खेल में शिक्षा देने के जो प्रयोग किए गए हैं, उनके सार्थक परिणाम मिले हैं। उनकी पाठ्यपुस्तकें अलग से तैयार करना संभवतः व्यावहारिक न हो पाए, परंतु उनके स्थानीय मिथकों, प्रतीकों, परंपराओं और संस्कारों को अध्यापन में कैसे सम्मिलित किया जाए, इस पर विचार हो सकता है। महिला शिक्षकों की संख्या बढ़ाना भी आवश्यक होगा। बालिकाओं को शालाओं में सुरक्षित और रुचिकर परिवेश देने की दिशा में भी कुछ किया जाना चाहिए। ❑

(सौजन्यः पत्र सूचना कार्यालय)

कुटीर तथा घरेलू ग्रामोद्योग

गिरीश चंद्र पांडे

भारत में घरेलू तथा कुटीर उद्योगों को हम असंगठित क्षेत्र में लेते हैं जहां कार्यरत कामगारों के लिए संगठित क्षेत्र की भांति भविष्यनिधि तथा पेंशन स्कीम आदि की कोई व्यवस्था नहीं है और न ही इन उद्योगों के विकास तथा संवर्धन के लिए पर्याप्त ढांचागत सुविधाएं ही उपलब्ध हैं। इसके बावजूद पिछले 50 वर्षों के दौरान इस क्षेत्र ने सामाजिक तथा आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भागीदारी की है। भारतीय संदर्भ में इन उद्योगों की महत्ता इस तथ्य से साबित होती है कि कुल औद्योगिक उत्पादन में इन उद्योगों का हिस्सा लगभग 50 प्रतिशत है और कुल औद्योगिक रोज़गार का लगभग 80 प्रतिशत भाग इसमें नियोजित है। अगर रेडीमेड गारमैंट्स को लें तो इस क्षेत्र में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से करीब 2 करोड़ लोग नियोजित हैं जिसमें सालाना 70 करोड़ का कारोबार किया जाता है। इसमें विदेशी निर्यात भी शामिल है। लेकिन यहां भी उल्लेखनीय है कि संगठित क्षेत्र का हिस्सा इसमें महज 7 करोड़ है। इस प्रकार मुर्गी पालन में लगभग 16 लाख नियोजित हैं। इसलिए लघु उद्योग क्षेत्र के कार्यनिष्पादन का समग्र अर्थव्यवस्था की प्रगति में सीधा प्रभाव पड़ता है परंतु इस क्षेत्र की उत्पादकता, कार्यक्षमता तथा प्रतिस्पर्धा में सुधार लाने हेतु अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

इस क्षेत्र के विकास हेतु सरकार के सहयोग के साथ–साथ निजी और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की महत्पूर्ण भागीदारी आवश्यक है। सरकार ने अपनी एक्जिम पालिसी 2002–2007 में चीन की तर्ज पर विशेष आर्थिक क्षेत्रों को खासा महत्व दिया है और कुटीर इकाइयों के निर्यात संवर्धन हेतु 5 करोड़ रुपये की राशि निर्धारित की गई है। इसके अलावा सरकार ने वर्ष 2001–2002 में हाजरी तथा हस्त उपकरणों के उप–क्षेत्रों में निवेश सीमा एक करोड़ रुपये से बढ़ाकर पांच करोड़ रुपये कर दी है। ऋण गारंटी निधि स्कीम के तहत संचित निधि में 125 करोड़ रुपये की राशि बढ़ाकर 200 करोड़ रुपये की गई है। चमड़ा वस्तुएं, जूते, खिलौनों से संबद्ध 14 वस्तुओं पर जून 2001 से आरक्षण हटाया गया है। पूर्ण रूप से छोटे उद्योगों हेतु बाजार विकास सहायता योजना प्रारंभ की गयी है। इसके अतिरिक्त कृषि तथा ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन देने हेतु 580 करोड़ रुपये परिव्यय की व्यवस्था की गयी है जिसमें खादी तथा ग्रामोद्योगों हेतु 392 करोड़

फोटो : ओम मिश्रा

रुपये का प्रावधान करते हुए इस क्षेत्र में रोजगार की संभावनाएं बढ़ाने की कोशिश की गयी है। भारतीय लघु उद्योग क्षेत्र की, वित्तीय समस्याओं के निदान में लघु उद्योग क्रेडिट गारंटी निधि ट्रस्ट की महत्वपूर्ण भूमिका है। जुलाई, 2000 को केंद्र सरकार और 'सिडबी' की पहल पर लघु उद्योगों को ऋण गारंटी सुविधा उपलब्ध कराने हेतु स्थापित इस ट्रस्ट ने 2 वर्ष के भीतर सफलता के कई पायदान चढ़े और लघु उद्योग क्षेत्र की ऋण समस्या का प्रबल सहारा बन गया है। इस ट्रस्ट में केंद्र सरकार और सिडबी ने 4 : 1 के अनुपात में 250 करोड़ रुपये का अंशदान किया है। इस ट्रस्ट में शामिल ऋण देने वाली संस्थाओं में लगभग 19 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, 4 निजी बैंक, 3 ग्रामीण बैंक, राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम, पूर्वोत्तर विकास संस्था शामिल हैं। पूरे देश में विस्तारित इस योजना की समूह निधि लगभग 250 करोड़ रुपये तक पहुंच गई है। गौरतलब है कि वर्तमान में कुटीर तथा लघु उद्योगों के समक्ष पूंजी, तकनीक तथा शोध जैसी सुविधाओं का अभाव है जबकि अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में पैठ बढ़ाने हेतु ये बातें जरूरी हैं। हाल ही में सरकार ने हथकरघा निर्मित वस्त्रों पर 100 करोड़ की एकबारगी विशेष छूट सहित इस उद्योग हेतु 225 करोड़ रुपये के पैकेज की घोषणा की है। साथ ही सरकार ने 10 लाख बुनकरों और शिल्पकारों के लिए विशेष बीमा स्कीम की घोषणा की है। राज्य सरकारों को अपने योजना कोष से धन मुहैया कराकर 10 प्रतिशत विशेष छूट देने का प्रावधान करने को कहा गया है। यहा यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक होगा कि भारत में निजी क्षेत्र की भागीदारी अपर्याप्त है जबकि अमरीका तथा बड़े देशों में इस क्षेत्र के अनुसंधान तथा विकास पर निजी क्षेत्र की भागीदारी लगभग 60 प्रतिशत है।

अभी हाल में बहुराष्ट्रीय कंपनी पेप्सी फूड लि. ने पंजाब कृषि निर्यात निगम पेग्रेक्सको से चंडीगढ़ में फलों की खेती के लिए एक करार पर हस्ताक्षर किए जिसके तहत खट्टे रसदार फलों जैसे – संतरा, नीबू, अंगूर, नारंगी, किन्नू के निर्यात की व्यवस्था है। गौरतलब है कि इस क्षेत्र में पंजाब का योगदान उल्लेखनीय है। वह खट्टेदार फलों का 60 प्रतिशत निर्यात विदेशों में करके पहले नंबर पर है। इससे पहले भी जालंधर में स्थानीय स्तर पर सोसाइटी गठित कर 35–35 लाख रुपये की प्रारंभिक पूंजी से हल्दी, मधुमक्खी पालन के क्षेत्र में शानदार पहल की गई है। एक प्रकार से यह उत्तर भारत में अपने किस्म की पहली परियोजना है। इससे दो लाभ होंगे जहां किसान स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन कर परंपरागत फसल चक्र के स्थान पर फसलों में भिन्नता लाकर कृषि में विविधता लाएंगे और अपनी आमदनी में वृद्धि के साथ विदेशी मुद्रा अर्जन में सहयोग करेंगे वहीं दूसरी ओर मानसून से उत्पन्न अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि की समस्या से भी निजात पाएंगे।

यह भी चिंतनीय है कि कुटीर उद्योग के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाला उद्योग भी वैश्वीकरण की चपेट में है। यद्यपि भारत विश्व के चाय का सबसे बड़ा उत्पादक तथा उपभोक्ता देश है, उसकी विश्व के चाय उत्पादन में 28 प्रतिशत तथा विश्व व्यापार में 13 प्रतिशत भागीदारी है लेकिन दक्षिण भारत तथा पूर्वोत्तर राज्यों में चाय का गिरता स्वाद चिंतनीय है। इसलिए नए अनुसंधान तथा खोज द्वारा चाय की गुणवत्ता में सुधार लाने के साथ–साथ मौजूदा कठोर श्रम कानूनों में लचीलापन लाया जाए, कामगारों की कार्यदशाओं में सुधार लाया जाए, उनके लिए बीमा की यथोचित सुविधाओं के साथ उन्हें इमदादी दर पर ईंधन, खाद्यान्न, आवास आदि मुहैया कराया जाए। साथ ही कामगारों के बच्चों की देखभाल, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि पर भी ध्यान केंद्रित किया जाए। इसी प्रकार खादी तथा ग्रामोद्योग के अधीन गांवों में चलने वाले बुनकर केंद्रों तथा आयोग द्वारा निर्मित उत्पादों की ब्रिक्री की व्यवस्था खस्ता हाल में है। इसलिए उन्हें पुनरुजीवित करने की आवश्यकता है। खुशी की बात है कि सरकार ने इस संबंध में 5 वर्ष का लगभग 1251 करोड़ रुपये के पैकेज के जरिए खादी ग्रामोद्योग को पुनरुजीवित करने की दिशा में कदम उठाया है। ग्राम पंचायतें इस संबंध में खादी ग्रामोद्योग के साथ मिलकर प्रत्येक गांव की जनसंख्या के आधार पर वहां खादी केंद्र की स्थापना के साथ स्थानीय स्तर पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने हेतु कुटीर उद्योगों की स्थापना में सहयोग दे सकती हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधनों पर पंचायतों की हकदारी सुनिश्चित हो। इससे जहां ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे वहीं लुप्त होती जा रही खादी के परंपरागत उत्पादों को प्रोत्साहन मिलेगा। साथ ही पंचायतें बागवानी फसलों, सुगंधित तथा चिकित्सकीय फसलों, मधुमक्खी पालन और रेशम आदि के विकास पर ध्यान दे सकती हैं।

निश्चित तौर पर ये प्रयास आज के वैश्वीकरण के दौर में जबकि देश में घरेलू तथा कुटीर उद्योगों के समक्ष अपने अस्तित्व को बनाए रखने का गंभीर संकट उपस्थित हो गया है, देश के लिए एक मील का पत्थर साबित होंगे। इसलिए ऐसे प्रयासों को अन्य राज्यों में भी विस्तारित किए जाने की आवश्यकता है। यह भी उल्लेखनीय है कि लगभग प्रत्येक राज्य में किसी न किसी रूप में स्थानीय स्तर पर प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र को ही लें वहां बांस, हथकरघा आदि की विपुल संभावनाएं मौजूद हैं तो दूसरी ओर उत्तरांचल में चाय–मसालों, जड़ी–बूटियों,फलफूल की व्यावसायिक खेती और खड़िया मिट्टी, तारपीन आदि से संबद्ध उद्योग स्थापित करके अच्छी आमदनी प्राप्त हो सकती है। इसके अलावा उत्तरांचल में गुच्छी (मार्केला) की खेती का दोहन यदि पारिस्थितिकी तथा आर्थिक दृष्टि से किया जाए तो ये वहां के निवासियों के लिए सोने का खज़ाना हो सकती है। एक अनुमान के अनुसार उत्तरांचल की पहाड़ियों में लगभग 1800 जड़ी–बूटियां पाई जाती हैं। इसी प्रकार दक्षिण राज्यों में नारियल जटा, गरम मसाला, मत्स्यपालन तथा काफी उद्योग प्रसिद्ध है। फूलों की खेती में कर्नाटक, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा का स्थान प्रमुख है लेकिन विश्व फूल कारोबार में भारत की भागीदारी नगण्य है। इसका कारण पैकेजिंग की अच्छी व्यवस्था का न होना तथा फूलों को देर तक तरोताजा बनाए रखने हेतु ढांचागत सुविधाओं का अभाव है। इसके अलावा देश के विभिन्न राज्यों में रेशम कीटपालन, खरगोशपालन, मुर्गीपालन की भी अपार संभावनाएं मौजूद हैं।

इसलिए रोजगार तथा विदेशी मुद्रा अर्जन की असीम संभावनाएं छिपाए तथा भारतीय अर्थव्यवस्था का मेरुदंड कहे जाने वाले घरेलू तथा कुटीर उद्योग क्षेत्र को फलने–फूलने का पर्याप्त अवसर देना आज समय की मांग है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

महिलाओं का ताजमहल

महाराष्ट्र में शोलापुर की दस हजार महिला बीड़ी मजदूर अपने घरों की मालिकन बनने जा रही हैं। इनमें से एक फातिमाबाई इसे अपने सपने को साकार होना मानती है। स्वागत नगर की शांतुबाई, पानीबाई गर्व से कहती हैं – "हमारे लिए तो यह एक महल है"। दातानगर की एक और लाभार्थी अपने इस मकान को स्वर्ग से सुंदर बताती है।

फिलहाल जिन बुरे हालात में वे रह रहीं थीं, उसे देखते हुए तो एक कमरे और रसोई का यह मकान निश्चित रूप से उनके लिए किसी शानदार महल से कम नहीं है। बीड़ी मजदूर अपने परिवारों के साथ 8 फुट लंबी और 6 फुट चौड़ी अंधेरी झुग्गियों में रहते हैं, जिनमें न तो बिजली है और न ही पानी। दयनीय हालात में रहने वाले इन मजदूरों से कमाई गई अपनी आमदनी का एक बड़ा हिस्सा किराए पर खर्च करना पड़ता है क्योंकि कई कपड़ा मिलें इन दिनों बीमार हो गई हैं।

एक महिला बीड़ी मजदूर दिन में लगभग 1,200 बीड़ी बनाती है और उसे लगभग 1,500 रुपये महीने की आमदनी हो जाती है। पिछले 10 सालों से अपने परिवारों का पेट पालने वाले इन व्यस्त महिला मजदूरों के लिए बड़े फख्र की बात है कि उन्होंने रहन–सहन की स्थितियों को बेहतर बनाने के लिए संघर्ष छेड़ने का समय निकाल लिया। इसका श्रेय विधायक नरसैया आदम को जाता है जिन्होंने इन मजदूरों को *गोदूताई परुलेकर महिला बीड़ी कामगार सहकारी गृहनिर्माण संस्था मर्यादित* में एकजुट किया। इस सहकारी आवास समिति की कोशिशें रंग लाईं और 1998 में दस हजार सस्ते मकानों के निर्माण का सिलसिला शुरू हुआ। शीघ्र ही केंद्र और राज्य सरकारों ने जमीन और सब्सिडी का बंदोबस्त किया।

सार्वजनिक – निजी भागीदारी

इस परियोजना की एक विशेषता यह है कि शोलापुर के एक निवासी श्री फंडे की एक निजी निर्माण कंपनी ने दस हजार सस्ते मकान बनाने का जिम्मा लिया। चार साल की छोटी सी अवधि में शोलापुर के इस शहर में दक्षिणी छोर पर खुंबारी में 450 एकड़ जमीन पर काम शुरू हुआ। औसतन 70,000 लोगों के लिए समूहों के रूप में मकानों को व्यवस्थित करने का ले–आउट तैयार किया गया। 25 समूहों में हरेक समूह में 100–100 मकान हैं।

ले–आउट

हरेक मकान के लिए 51.36 वर्ग मीटर जमीन दी गई है, जिसमें से आधी जगह खुली छोड़ी गई है। हरेक मकान में एक कमरा और एक रसोई, बाथरूम और शौचालय है। मकान तक पहुंचने के लिए तीन मीटर चौड़ी सड़क बनाई गई है। खास बात तो यह है कि इसके डिजाइन में लाभार्थियों के सुझाव पर इसे समतल बनाया गया ताकि भविष्य में और भी निर्माण किया जा सके। इसी तरह रसोई में सोने के लिए एक परछत्ती बनाई गई है। 8,700 मकान तैयार हो चुके हैं और शेष 1,300 तैयार किए जा रहे हैं।

बुनियादी सुविधाएं

इस आवासीय परिसर में बुनियादी सुविधाओं और खेल के मैदान के अलावा व्यापारिक और संस्थागत क्षेत्रों की भी व्यवस्था की गई है। इसमें 150 बिस्तरों का एक अस्पताल बनाया जाएगा, जिसके लिए आधुनिक उपकरण आदि खरीदने के लिए श्रम मंत्रालय एक करोड़ रुपये देगा।

रोजगार गारंटी योजना के तहत शोलापुर जिला परिषद ने खुंबारी से नीलानगर तक प्रमुख पहुंच सड़क बनाई है। अक्कलकोट से कोटगी रोड तक एक और पहुंच सड़क निर्माणाधीन है।

महाराष्ट्र जीवन प्राधिकरण द्वारा पीने के पानी की एक योजना मंजूर कर ली गई है, जिसके तहत उठे हुए 2 जलाशय, पंप और हरेक घर में लगाए गई 250–250 लीटर की दो टंकियों को भरने के लिए वितरण व्यवस्था शामिल है। जल निकासी के काम के लिए राज्य सरकार से आठ करोड़ रुपये का अनुदान मांगा गया है। महाराष्ट्र राज्य बिजली बोर्ड ने बुनियादी बिजली सप्लाई ढांचे के लिए 3.75 करोड़ रुपए दिए हैं जिससे एक सब–स्टेशन, ट्रांसफार्मर, 33केवी/11केवी की लाइनें और 380 लाइट लगाई जाएंगी।

सब्सिडी

केंद्र और महाराष्ट्र सरकार द्वारा 50 : 50 अनुपात के आधार पर 25.50 करोड़ रुपये प्रदान किए गए हैं, जिसमें से हरेक मकान के लिए सरकार द्वारा 20–20 हजार रुपये की सब्सिडी दी जाएगी और शेष 20 हजार रुपये लाभार्थियों को चुकाने होंगे।

इस परियोजना के दौरे पर गए श्रम और रोजगार मंत्री शीशराम ओला ने बीड़ी मजदूरों के लिए मकानों के निर्माण के वास्ते केंद्रीय सब्सिडी को 20 हजार रुपये से बढ़ाकर 40 हजार रुपये करने की घोषणा की। इससे शोलापुर के बाकी बचे बीड़ी मजदूरों को अपना घर हासिल करने में मदद मिलेगी। क्योंकि इन मजदूरों को विभिन्न उपायों से मौजूदा योजना के तहत मकान नहीं दिए जा सके थे। शोलापुर में लगभग 75 हजार बीड़ी मजदूर हैं, जिनमें से 60 हजार पंजीकृत हैं।

मकानों के लिए आमदनी की पात्रता को 3,500 रुपये मासिक से बढ़ाकर 6,500 रुपये कर दिया गया है। इस फैसले और सब्सिडी में वृद्धि को देखते हुए उम्मीद की जाती है कि देश के अन्य स्थानों पर भी ऐसी परियोजनाएं शुरू हो सकेंगी।

शोलापुर की कम लागत वाली आवास परियोजना को एशिया में अपने किस्म की सबसे बड़ी योजना बनाया जा रहा है। यह सार्वजनिक–निजी क्षेत्र की भागीदारी का एक शानदार उदाहरण है। बिल्कुल गरीब औरतों के सामूहिक प्रयास के परिणामस्वरूप ही यह योजना साकार रूप ले सकी है। इस आंदोलन के प्रेरक नरसैया आदम बड़े गर्व के साथ कहते हैं "यह उनका ताजमहल है"। ❑

(सौजन्य : पत्र सूचना कार्यालय)

सफलता की कहानी-II

निरक्षर कैदियों को साक्षर बनाने का सफल प्रयास

घनश्याम वर्मा

बारां जिला मुख्यालय पर स्थित जिला कारागृह में आने वाले विचाराधीन बंदियों को साक्षर बनाने का सफल प्रयास किया जा रहा है। यहां औसतन डेढ़ सौ से दो सौ तक कैदी रहते हैं जिनमें अधिकांश विचाराधीन (अंडर ट्रायल) ही होते हैं। इन्हीं कैदियों में से कोई पढ़ा–लिखा कैदी स्वरुचि से अध्यापन कार्य करके जेल में रहने वाले निरक्षर कैदी साथियों को साक्षर बनाता है।

बारां–झालावाड़ मार्ग पर स्थित कारागृह भवन में एक साक्षरता केंद्र चलाया जा रहा है, जिसमें विचाराधीन कैदियों में से निरक्षर कैदियों को अक्षर ज्ञान, गिनती, जोड़, बाकी, गुणा, भाग तथा पढ़ना–लिखना सिखाया जाता है। आजकल एक विचाराधीन कैदी कोयला का देवकिशन माली इस केंद्र में बहुत रुचिपूर्वक अध्यापन कार्य कर रहा है। देवकिशन ने बताया कि वह दसवीं कक्षा उत्तीर्ण है तथा छात्र जीवन में कक्षा छठी से दसवीं तक स्काउट रहा है। कारागृह के भीतर इस वर्ष मार्च महीने से प्रतिदिन सुबह 8 से 10 बजे के मध्य साक्षरता की कक्षा वह स्वयं चला रहा है। उससे पहले बारां का ही एक कैदी पप्पू सुमन तथा सोरखण्ड का राम भरोसे गुर्जर निरक्षरों को पढ़ाने का कार्य करते थे, जो अब यहां से मुक्त होकर जा चुके हैं। देवकिशन ने बताया कि साक्षरता विभाग द्वारा दी गई तीन पुस्तकों उजास भाग–1, भाग–2 एवं भाग–3 को क्रमशः इन निरक्षर कैदियों को पढ़ाया जाता है। इनमें से कई कैदी बहुत जल्दी इन तीनों पोथियों को पूरा कर लेते हैं तो कई थोड़ा देर से पूरा कर पाते हैं। उसने बताया कि साक्षरता केंद्र में आने से इन कैदियों का समय भी व्यतीत हो जाता है। प्रशिक्षक कैदी देवकिशन का कहना है कि हमें उस समय बड़ी खुशी होती है, जब विचाराधीन निरक्षर कैदी भाई जो जेल में प्रवेश के समय रजिस्टर में अगूंठा लगाकर आता है, वह मुक्त होते समय गर्व के साथ हस्ताक्षर करके यहां से जाता है।

कारागृह के साक्षरता केंद्र से लाभान्वित हो रहा एक कैदी बराना का राम निवास सात तक पहाड़े लिख लेता है। वह छोटे गुणा–भाग कर लेता है और धीमी गति से किताब भी पढ़ लेता है। नाई का तालाब गांव का गोमाराम सौ तक गिनती बोल सकता है, लेकिन अभी लिखने का अभ्यास नहीं है। वह अपने परिवार जनों के नाम आसानी से लिखने लगा है तथा उजास पुस्तकों के दो भाग पूरे कर चुका है। ग्राम भीलवाड़ी उंचा का प्रेम नारायण आखर

(शेष पृष्ठ 42 पर)

हमारी संस्कृति का हिस्सा थीं पगड़ियां

रवि भारती

यह पीढ़ी पगड़ी के महत्व से भले ही अनभिज्ञ हो लेकिन यह हमारी संस्कृति का हिस्सा हैं। संस्कृत साहित्य में मर्यादा और सौंदर्य का प्रतीक हैं। वेदों–लोककथाओं में इनका लगातार उल्लेख हुआ है। यह न केवल आदमी की पहचान है बल्कि पांडित्य, प्रतिष्ठा, व्यक्तित्व की विराटता का सूचक भी हैं। अतीत की ओर देखें तो प्राचीन समय में व्यक्ति लोचदार छाल–टहनियों को अपने सिर पर बांधता था। टहनियों–पत्तियों से बने सुंदर मुकुट का महत्व ग्रीक शासन काल में भी था। इस तरह के मुकुट ओलम्पिक पदक विजेताओं ने भी पहने हैं। पूर्व वैदिक काल में केवल दो ही वस्त्र पहने जाते थे – अधोवस्त्र और उत्तरीय। लेकिन उत्तर वैदिक काल में शिरोवस्त्र पहने जाने के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। विद्वानों के मुताबिक पुरुष ही नहीं, महिलाएं भी पगड़ी पहनती थीं। 'शतपथ ब्राह्मण संहिता' में शासक के साथ साम्राज्ञी की हैसियत से, इंद्राणी ने पगड़ी पहनी थी। इधर दक्षिण भारत में अंजता के भित्तिचित्र और मूर्तियां, अमरावती और नागार्जुन कोंडा के शिल्पों में पगड़ियों के अद्भुत नमूनों के पर्याप्त उल्लेख हैं। ये पगड़ियां सामान्यतः सफेद रंग की होती थीं। पगड़ी पर अंलकृत पट्टियों को, जिसे पटबंध कहा जाता है, लगाया जाता था। मौलिबंध एक विशेष प्रकार की पगड़ी थी जिस पर सुंदर मोतियों का काम होता था। दो फेंटे नीचे बंधी हुई; मोतियों की लड़ों को अलंकृत और शंखाकार पगड़ी भी इस समय की विशेषता रही। गुप्तकाल में सम्राट मुकुट पहनते थे और पगड़ी मुख्यतः प्रमुख अधिकारी और राजा के मंत्रिगण। आम आदमी का सामान्यतः अपने बालों को खुला छोड़ना गुर्णकुंतल कहलाता था। गायक–वादक अथवा अन्य कलाकार टोपी पहनते थे। चाहे हिंदू हो या मुसलमान, सिर पर कोई–न–कोई वस्त्र पहनना जरूरी था। सिर ढके बिना समाज में घूमना–फिरना असभ्यता समझा जाता था। इस काल में हिंदू चाहे किसी भी जाति के हों, पगड़ी अवश्य पहनते थे। ये पगड़ियां अनेक रंगों की, ऊंची और नुकीली हुआ करती थीं। मुसलमान संत दरवेश टोपी पहनते–उलेमा पगड़ी बांधते थे। रईस लोग प्रायः बंगाल की मलमल या रेशम की पगड़ियां पहनते थे जिनकी लंबाई प्रायः 25–30 गज और वजन लगभग 4 औंस हुआ करता था। जबकि 'राजपूत युग' में शासक और उसके परिवार के सदस्य अनेक प्रकार की पगड़िया पहनते थे – खासकर आम दरबार और समारोह पगड़ियों की कतारों से चमक उठते थे – प्रशासन के अधिकारी और मंत्री और वरिष्ठ व्यक्ति अपनी पगड़ियों को मोतियों की लड़ों अथवा कभी फूलों से भी सजाते थे। इन पगड़ियों पर चित्राकंन भी होता था। लेकिन सामान्य लोग इससे दूर रहे। उन्होंने अपनी संस्कृति और परंपरा को ध्यान में रखकर, हैसियत से मेल खाती हुई, अलग–अलग नमूनों की पगड़ियां पहनीं।

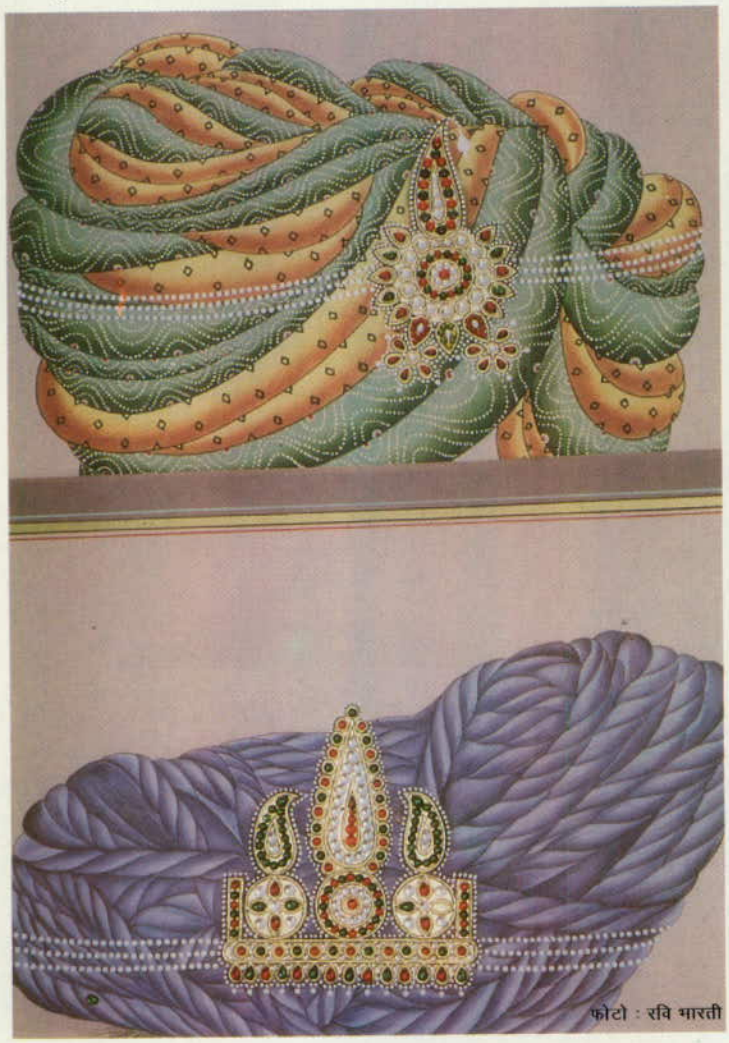

फोटो : रवि भारती

आर्थिक–सामाजिक हैसियत के अलावा पगड़ियां विराट व्यक्तित्व की परिचायक भी थीं। शिवाजी और गुरु गोविंद सिंह की पगड़ी उनकी ओजस्विता को उजागर करती थीं। बाल गंगाधर तिलक की पगड़ी उनकी विद्धता का सूचक तथा सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन की पगड़ी उनकी गंभीर

(शेष पृष्ठ 48 पर)

लोक कहावतें और भारतीय ग्राम्य संस्कृति

इंदल सिंह भदौरिया

अतीत के आईने में झांकने पर हम पाते हैं कि हमारी संस्कृति ग्राम्य संस्कृति है। तभी तो राष्ट्रपिता महात्मा गांधी कहा करते थे– भारतमाता ग्राम्यवासिनी।

पाषाण युग से परमाणु युग तक की लंबी यात्रा तय करते हुए यह संस्कृति कई पड़ावों से गुजरी है। हर पड़ाव ने इसे एक नई उपलब्धि और अभूतपूर्व अनूभूति के उपहारों से सजाया और संवारा है। फलतः नवीनता का समागम यात्रा के अतीत के साथ जुड़ता गया लेकिन हमारी संस्कृति नहीं बदली। परंपरागत संस्कार, अर्जित ज्ञान, कार्य अनुभव और जीवंत प्रयोगों ने कुछ परिणाम दिए। यही परिणाम और निष्कर्ष हमारी संस्कृति के प्रहरी और मार्गदर्शक का काम करने लगे। पीढ़ियां इन्हें पूर्वजों की विरासत मानकर इन पर अमल करने लगीं। आज इन्हें ही हम आम भाषा में लोक गाथाएं या लोक कहावतें कहकर पुकारते हैं। दूसरे शब्दों में प्रकृति परिवेक्षणों और व्यासायिक अनुभवों – सभी पक्षी पीढ़ी–दर–पीढ़ी संतति के पड़ावों को पार करके युगांतर की यात्रा करने लगे, जिनके बसेरे को हम लोक कहावतों के नाम से जानने लगे हैं। तभी तो हमारी कहावतों का भारतीय ग्राम्य संस्कृति के साथ चोली–दामन का साथ है।

यह सर्वसम्मति से स्वीकारा जाता है कि हमारा देश ग्राम प्रधान है और गांव कृषि व्यवसाय प्रधान है। इसलिए ग्राम्य विकास का दूसरा नाम कृषि विकास भी कहा जाने लगा। यह सत्य है कि गांव का हर वासी या तो किसान है या खेतिहर मजदूर। उसकी जड़ जमीन और खेती से अवश्य ही जुड़ी हुई है। तभी ग्राम्य विकास का सपना बिना कृषि विकास के केवल अधूरा ही नहीं सारहीन और फीका भी लगता है। इस तरह यह स्पष्ट हो गया है कि कृषि विकास ग्राम्य विकास का महत्वपूर्ण और अनिवार्य अध्याय है। तब यह देखना है कि इस क्षेत्र में लोक कहावतों का क्या योगदान है।

मौसम शब्द का खेती में कितना महत्व है यह तो सब अच्छी तरह जानते ही हैं। मौसम के संकेतों, लक्षणों और अनुकूलता तथा प्रतिकूलता पर ही खेती का विकास और विनाश निर्भर करता है। तभी तो ऋतु भविष्यवाणी शास्त्र अथवा मौसम विज्ञान को कृषि विज्ञान के क्षेत्र में चोली–दामन का दर्जा मिला है। हमारे कहावतकार बिना किसी उपकरण मात्र के कुछ प्रकृति परिवेक्षणों और वंशानुगत अनुभवों के आधार पर इसकी व्याख्या करते हैं।

आकाश में तीतरपंखी (चितकबरे) बादलों को देखकर आप भले ही कुछ न समझें लेकिन कहावतकार पूर्व अनुमान लगाते हैं–

तीतरपंखी बादली जिस दिन नभ में होय।
तब तो निश्चय जानिये, तुरंत ही वर्षा होय।।

हवा हमें या तो शीतल, मंद और सुगंधित लगती है या गर्म और ठंडी लेकिन कहावत हवा की दिशा से वर्षा का अनुमान लगा लेते हैं–

जोर चले पुरवाई, बादल काट लगाई।

जेठ मास की तपती दोपहरी हम सबको बड़ी कष्टदायक प्रतीत होती है, लेकिन कहावतकार इसे अच्छी वर्षा का शुभ संकेत मानते हैं–

जेठ मास में जो तपे निराशा,
है बहुतई वर्षा की आशा।

शाम का इंद्रधनुष हम सबको बहुत सुंदर मनमोहक लगता है। इसी तरह मोरों की सुंदर आवाज मानव मन को आनंदित कर देती है, लेकिन कहावतकार इसका परिणाम घनघोर वर्षा से ही आंकते हैं–

सांचे धनुष सकारे मोरा,
यह दोनों पानी के बोरा।

दादुर यानी मेंढक जिन्हें गोस्वामी तुलसी दास ने वेदपाठियों की पवित्र संज्ञा दी है, यदि वे जेठ के महीने के अंतिम चरणों में बोलते सुनाई दें तो कहावत सम्राट भड्डरी इसे वर्षा का अचूक संकेत मानते हैं–

उतरत जेठ जो बोलत दादुर,
कहें भड्डरी बरसे बादर।

जब बर्तन में रखा पानी अत्यधिक गर्म होने लगे और चिड़ियां धूल में नहाती नजर आएं तथा चीटियां अपने अंडा लेकर ऊपर चढ़ती दिखाई दें तो कहावतकार घाघ इसे अच्छी बरसात की भविष्यवाणी मानते हैं–

कलसा पानी गर्म है, चिड़ियां नहाएं धूल।
अंडा ले चींटी चढ़े, बरसे घाघ भरपूर।।

खेती एक ऐसा व्यवसाय है, जिसमें व्यक्तिगत ध्यान देना अनिवार्य होता है–

खेती पाती वीनती, और घोड़ का तंग।
अपने हाथ संभालिए, चाहे लाख हों संग।।

खेती की विभिन्न क्रियाओं एवं पहलुओं पर भी कहावतकारों ने अपनी सीख दी है, जुताई की महिमा बताते हुए कहा है–

बीज पड़े फल अच्छा देत,
जितना गहरा जोते खेत।
मेढ़ बांध इस जाते दें, मनमाना बीघा घर लें।

खाद खेती की जननी होती है। कहावतकारों ने खाद को भी अपनी कहावतों का विषय बनाया है–

खाद पड़े तो खेत, नहीं कुड़ा रेत।
गोबर मैला नीम की खेती, इनसे खेती

बहुतई फली।।

खाद की महिमा कर्मों के फल से भी ज्यादा अकाट्य और अचूक है। कविवर रहीम जी ने इस बात को कहावत की भाषा में स्पष्ट किया है–

खाद कूड़ा न टरै, कर्म लिखा टर जाय।
रहमन कहि बुझाइके, खेत खाद पर जाय।।

बीज की बुआई और बीज की दूरी पर भी अनुभवी कहावतकार अपनी राय देते हैं–

सन घना वन वेगरा, मेंढक फांदे ज्वार।
पैग–पैग पर बाजरा, अरहर बीता पार।।
गाजर कंजी और मूरी, इनको बोबे कुछ–कुछ दूरी।

बुआई के समय पर चर्चा करते हुए कहावतकार कहते हैं–

आगे खेती आगे–आगे,
पीछे खेती भागे जागे।

गोस्वामी तुलसीदास ने भी निराई–गुड़ाई करने वाले किसान को चतुर और उन्नतशील किसान माना है–

कृषि निरावै चतुर किसाना।

खेती में पशुओं की अहम् भूमिका होती है। सुंदर बैल की जोड़ी किसान के भाग्य का प्रतीक मानी जाती है–

है उत्तम खेती बाकी, होय मेवाती गोई जाकी।
पतली पिड़री मोटी टां, पूंछ होय भुई तरयाना।।
जाकै होवे ऐसी गोई, ताको भाग्य सरावै सब कोई।।

गांव की अन्य विधाओं एवं व्यवस्थाओं पर भी कहावतकारों ने अपनी राय दी है, और किसी चीज की अधिकता पर टिप्पणी करते हुए कहा है–

अति का बुरा है बोलना, अति की बुरी है चुप।
अति का बुरा है बरतना, अति की बुरी है धूप।।

मनुष्य को अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही कर्म करना शोभा देता है, और इसी से उसकी भलाई भी होती है–

उतने पांय पसारिये, जैतन लंबी सौर।

संग्रह की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए कहावतकारों ने कहा है–

बूंद बूंद से घट भरै, राई बने पहाड़।
पैसा पाई जोड़ ली, बुरे दिनों की आड़।।

पंचायती व्यवस्था एवं इसकी उपयोगिता और महत्व को बताते हुए कहावतकारों ने कहा है–

पांच पंच मिल किजै काजा।
हांनि लाभ की करे न लाचा।।

दूसरे की शक्ति तथा हाथ आये अवसर पर इतराना मनुष्य को शोभा नहीं देता–

चार दिन की चांदनी, फिर अंधेरी रात।

अपनी कड़ी मेहनत की रूखी–सूखी रोटी पर संतोष करना मानव धर्म है, वहीं दूसरों के हक को हड़पना अधर्म है। इन्हीं भावनाओं को कहावतकारों ने इस तरह व्यक्त किया है–

रूखी–सूखी खाय के, ठंडा पानी पीव।
देख पराई चूपड़ी, मत ललचाये जीभ।।

सहकारिता और मिल जुलकर कार्य करने की भावनाओं को अत्यधिक व्यावहारिक और आदर्श बताते हुए कहावतकारों ने कहा है–

सात पांच की लाकड़ी, एक जने का बोझ।

इस प्रकार हम पाते हैं कि प्रबुद्ध कहावतकारों ने समूचे ग्राम्य विकास एवं कृषि विकास को दृष्टिगत रखते हुए जो अनुभूतियां समाज को दी हैं, वे बहुमूल्य एवं अमल करने के योग्य हैं। ❑

(लेखक सूचना एवं जन–संपर्क विभाग मेरठ उ.प्र. में उप–निदेशक हैं)

(पृष्ठ 39 का शेष) **निरक्षर कैदियों को ...**

पोथी उजास भाग तीन पूरा कर चुका है। उसे सौ तक गिनती लिखनी–पढ़नी आती है तथा पुस्तक भी अच्छी तरह पढ़ लेता है। इसी प्रकार महेशपुर का लल्लू यादव भी उजास का तीसरा भाग पूरा कर चुका है। जेल में आने तक वह भी निरक्षर था। इस वर्ष मार्च से जून माह तक चार माह में साठ निरक्षर कैदी साक्षर किए जा चुके हैं।

जेल के कैदियों की समयबद्ध दिनचर्या तय की हुई है। सभी कैदी प्रतिदिन प्रातः 7 बजे सामूहिक रूप से सर्वधर्म प्रार्थना सभा करते हैं और सायंकाल आरती भी करते हैं। प्रत्येक मंगलवार तथा शनिवार को बैरकों में भजन–कीर्तन के कार्यक्रम होते हैं। योगाभ्यास, पी.टी. एवं वालीबाल खेलना भी इनकी नियमित दिनचर्या के कार्य हैं। धर्माचार्यों, समाजसेवियों द्वारा यदा–कदा यहां आकर प्रवचन दिए जाने से कैदियों के आचरण एवं व्यवहार में काफी बदलाव आया है। करीब 50 प्रतिशत कैदी गुटखा, जर्दा एवं धूम्रपान आदि छोड़ने का संकल्प ले चुके हैं। जेल की चार बैरकों में टी.वी. सेट लगे हुए हैं, जिन पर ये लोग दूरदर्शन चैनल पर आने वाले समाचार तथा शिक्षाप्रद और मनोरंजन कार्यक्रम देखते हैं। महिलाओं की बैरक अलग हैं।

कारागृह के अंदर कैदियों को मुहैया करवाई गई सुविधाओं में एक पुस्तकालय भी है, जिसमें विभिन्न धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा भेंट किया गया सद्साहित्य संकलित है। इस पुस्तकालय में उपलब्ध सभी पुस्तकों को एक पंजिका में दर्ज किया हुआ है, जिन्हें स्वाध्याय के लिए यहां के कैदियों को जारी किया जाता है। पुस्तकालय में कई प्रकार की धार्मिक, नैतिक, राष्ट्रीय एवं साहित्यिक पुस्तकें उपलब्ध हैं। इस पुस्तकालय का संचालन कोई सरकारी लाइब्रेरियन नहीं करता, बल्कि विचाराधीन कैदी बोरदा का रामचंद्र मीणा स्वेच्छा से यह कार्य कर रहा है। रामचंद्र तीन वर्ष का सजायाफ्ता कैदी है और वह इस पुस्तकालय का संचालन करते हुए अब तक आधी सजा काट चुका है।

समय–समय पर वरिष्ठ अधिकारीगण इस जेल का निरीक्षण करते हैं। जिला कलक्टर स्वयं जेल की व्यवस्थाओं के सुचारू संचालन की नियमित जानकारी लेते हैं। कारागृह के प्रभारी बारां के उप जिला कलक्टर भी कभी पूर्व निर्धारित कार्यक्रमानुसार तो कभी आकस्मिक रूप से जेल का निरीक्षण कर व्यवस्थाओं का जायजा लेते रहते हैं। विभाग के राज्य एवं संभाग स्तर के अधिकारी भी अपने निर्धारित मानदंडों के अनुसार जेल का निरीक्षण करते हैं। उच्च अधिकारियों द्वारा दिए गए दिशा–निर्देशों एवं सुझावों के अनुसार जेल की व्यवस्थाओं में समय–समय पर आवश्यक सुधार एवं विकास कार्य भी करवाये जाते हैं। ❑

(लेखक बारां (राज.) में सूचना एवं जन संपर्क अधिकारी हैं)

पौष्टिक आहार : स्वास्थ्य का मूल आधार

डा. नीना कनौजिया

'आहार' एक ऐसा भोज्य पदार्थ है, जिसके कई रूप हैं, जो इस भूलोक पर रहने वाले विभिन्न प्रकार के जीवजंतुओं को विशेषतौर से मनुष्य को तृप्त करता है। आहार उसकी उस भूख को शांत करता है जिसके लिए वह न जाने कितने संघर्ष करता है।

आजकल हमारे देश में आहार पर विदेशी सभ्यता का ज्यादा प्रभाव है; जिधर देखो जंकफूड, फास्टफूड, ब्रेड, पिज्जा, कोल्ड–ड्रिंक और न जाने क्या–क्या। इस तरह के खाद्य पदार्थों ने, हमारे स्वदेशी, शुद्ध और पौष्टिक भोजन पर अपनी चमक–दमक व बनावटी स्वाद का प्रभाव डाला है, जिसका कुप्रभाव चारों तरफ देखने को मिलता है जिसमें मुख्य रूप से मोटापा, दिल की बीमारी, मधुमेह, पाचन तंत्र की अनियमितता, नेत्र दृष्टि की कमजोरी, हड्डियों में कैल्शियम आदि की कमी शामिल है।

आज की नारी के पास इतना समय कहां है कि अपने बच्चे को बैठकर, फुसलाकर दूध पिला सके। बच्चे ने दूध पीने से मना किया और कोल्ड ड्रिंक की मांग की, मां ने सोचा चलो कुछ तो पी लेगा और अपने को संतुष्ट कर, वह अपने काम पर चल पड़ती है।

देखा जाये तो ग्रामीणों में अभी भी आहार की पौष्टिकता का मूल रूप बचा हुआ है। गांवों में अभी भी शुद्ध और ताजे भोजन का सेवन किया जाता है। शहरों में तो खाद्य एवं पेय पदार्थों के वास्तविक रूप को बदलकर, उसे डिब्बों में कैद कर, प्रीसरवेटिव तरीकों से उसमें रसायन जल दिया जाता है जो उसके मूल स्वाद और पौष्टिकता दोनों को नष्ट कर देता है। उसे और आकर्षित दिखाने के लिए उसमें कृत्रिम रंग और महक को डाला जाता है जो स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक है।

प्रत्येक प्राणी के लिए भूख बहुत ही महत्वपूर्ण वृत्ति है जिसे शांत करने के लिए उसे आहार चाहिए वो चाहे साग–सब्जी, अनाज, या जीव–जंतु ही क्यों न हो, इसके बिना वह जीवित नहीं रह सकता है। आहार से केवल भूख ही शांत नहीं होती बल्कि उसे शक्ति तथा तृप्ति की भी अनुभूति होती है। आहार जब शरीर में प्रवेश करता है तो उसकी क्रिया होती है वही **पोषकता** कहलाती है।

आहार के अनेक प्रकार के कार्य होते हैं।

शरीर पोषक

ये वो आहार होते हैं जो हमारे शरीर की टूट–फूट या क्षति का पूरण करते हैं, जिससे हमारा स्वास्थ्य संयमित रह सके। जिसमें जल, प्रोटीन, लवण, मुख्य पोषक तत्व होते हैं।

शक्तिदायक

शरीर का विकास, उसकी ऊष्मा तथा कार्य करने की आवश्यकता की पूर्ति के लिए जो

वसा व कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं।

हम विभिन्न प्रकार के भोजन पदार्थों (खाद्य एवं पेय) का सेवन करते हैं जिनमें कुछ पौष्टिक तत्व भी होते हैं इन्हीं पौष्टिक तत्वों के संगठन को संतुलित आहार कहते हैं।

यह पौष्टिक तत्व **'छः तत्वों'** का संगठन होता है जिनका हमारे भोजन में रहना बहुत जरूरी होता है क्योंकि यदि इनका अनुपात बिगड़ जाए तो हमारा शरीर बाहरी दुष्प्रभाव को झेलने में असमर्थ होगा और तब रोग का आक्रमण स्वाभाविक हो जाता है। ये छः तत्व है प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट्स, विटामिन खनिज–लवण और जल।

आहार के संबंध में लोग भ्रमित रहते हैं। कुछ लोग भरपेट भोजन करने को ही, शरीर की वृद्धि तथा मरम्मत के लिए ठीक समझते हैं तो कुछ लोग मंहगे भोजन को ही पौष्टिक भोजन मानते हैं परंतु कुछ तो अपनी जीभ की लालसा को ज्यादा महत्व देते हुए, स्वादिष्ट भोजन कर, इस भ्रम में रहते हैं कि उन्होंने शरीर की सभी आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले सभी तत्व ले लिए हैं।

उत्तम स्वास्थ्य के लिए सभी मनुष्यों को प्रतिदिन, छः तत्वों से संगठित भोजन का सेवन करना चाहिए जो सही मायने में **पौष्टिक आहार** कहलाता है।

संतुलित भोजन या बैलेन्स डाइट में भोजन के अनिवार्य तत्व पर्याप्त मात्रा एवं सही अनुपात में होने चाहिए।

	तत्व	मात्रा
1.	गेहूं	450 ग्राम
2.	दालें	100 ग्राम
3.	हरी सब्जियां	125 ग्राम
4.	फल	125 ग्राम
5.	दूध	300 ग्राम
6.	चीनी	60 ग्राम
7.	घी	60 ग्राम
8.	मांस	100 ग्राम
9.	अंडा	60 ग्राम

हमारे देश में कुछ लोग शाकाहारी हैं तथा कुछ लोग मांसाहारी। परंतु शाकाहार और मांसाहार दोनों के अपने अलग–अलग गुण व अवगुण होते हैं। प्रोटीन, वसा तथा कुछ विटामिनों की दृष्टि से परिपूर्ण होने के कारण मांसाहार महत्वपूर्ण माना जाता है परंतु इन तत्वों के अतियोग आदि से पाचन संबंधी कठिनाई आदि के कारण यह उचित नहीं है। यह तामसिक प्रभाव वाला माना जाता हैं।

आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से भी आजकल मांसाहार को दूरगामी कुप्रभाव वाला माना जाने लगा है क्योंकि मांसाहार का शरीर के अनेक जैविक अंगों पर प्रतिकूल असर पड़ता है। यदि आहार में उपयुक्त मात्रा में प्रोटीन आदि न हो तो रोगी को मांसाहार दिया जाता है। यह शक्ति, वृद्धिकारक तथा शरीर के भार को बढ़ाने वाला होता है।

शाकाहारी भोजन तो हल्का, सात्विक व सुपाच्य होता है। अधिकतर शाकाहारियों के भोजन में प्रोटीन तथा वसा की कमी होने के कारण उन्हें कई कष्टों का सामना भी करना पड़ता है। परंतु यदि संतुलित आहार का सेवन किया जाए तो इस कमी की पूर्ति की जा सकती है। दालें, सोयाबीन, फल, हरी सब्जियों आदि का यदि प्रचुर और सही मात्रा में प्रयोग किया जाए तो इससे श्रेष्ठ आहार कोई नहीं है। आहार में दूध, घी, मक्खन आदि का व्यक्ति के अनुसार समायोजन करके पोषण पूर्णरूप से संभव है।

अब यह दुविधा रहती है कि आहार तो विभिन्न प्रकार के होते हैं और उनमें कौन–सा पौष्टिक तत्व पाया जाता है। प्रत्येक मनुष्य की शारीरिक व मानसिक प्रकृति अलग–अलग होती है। सभी एक जैसा आहार नहीं कर सकते, सभी को अपने स्वास्थ्य, आयु, जिस वातावरण में रह रहे हैं आदि को ध्यान में रखकर आहार का सेवन करना चाहिए।

कई तरह के आहार द्रव्य होते है जिन्हें बारह वर्गों में बांटा गया है और इसी के आधार पर तत्कालीन द्रव्यों के स्वरूप का वर्णन किया जा सकता है :

शूक धान्य वर्ग (कार्नस्)

इसे **अन्न वर्ग** भी कहते हैं। इस वर्ग के अंतर्गत चावल, गेहूं, ज्वार, बाजरा, जौ तथा मक्का प्रमुख अन्न आते हैं। जिनका हमारे देश में आहार रूप में उपयोग होता है। ये हमारे आहार में ऊर्जा के प्रमुख स्रोत होते हैं और लगभग तीन–चौथाई ऊर्जा इन्हीं के द्वारा प्राप्त होती है।

अन्न वर्ग के द्रव्यों में प्रमुख घटक कार्बोहाइड्रेट्स ही होता है प्रोटीन प्रायः 6–12 प्रतिशत तक पाया जाता है, अति आवश्यक अमीनो अम्ल की इनमें कमी होती है। अन्न वर्ग में खनिज लवण भी अल्प मात्रा में पाया जाता है। विटामिन 'सी' किसी भी अन्न में नहीं पाया जाता है।

शिंबी वर्ग

इस वर्ग में सभी प्रकार की दालें आती हैं। इस वर्ग के द्रव्यों में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। शाकाहारियों के लिए यह प्रमुख प्रोटीन स्रोत होता है। परंतु इनमें भी आवश्यक अमीनो अम्ल पर्याप्त मात्रा में नहीं होते हैं। खनिज लवण भी इनमें कम ही होते हैं। इनमें विटामिन 'बी' पाया जाता है परंतु विटामिन 'सी' नहीं पाया जाता है। यदि दालों को भिगोकर नमी द्वारा अंकुरित कर लिया जाय तो उनमें विटामिन 'सी' उपस्थित रहता है।

कंदमूल

आलू, शकरकंद, जिमीकंद, अरबी, शलजम, गाजर, मूली आदि प्रमुख खाद्य पदार्थ कंदमूल वर्ग में आते हैं। इनमें कार्बोहाइड्रेट्स बहुत होता है और इसी कारण ये ऊर्जा के प्रमुख स्रोत होते हैं। गाजर में कैनेरटिन तथा आलू में काफी मात्रा में विटामिन 'सी' पाया जाता है।

फल वर्ग

आंवला, सेब, केला, बेल, खुबानी, खजूर, अंजीर, अंगूर जम्बू, लीची, मौसमी, संतरा, आम, अमरूद, पपीता, अनार, अनन्नास, स्ट्राबेरी प्रमुख हैं। खरबूजा, तरबूज तथा पके टमाटर भी फल वर्ग में आते हैं। फलों में विटामिन तथा खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इनमें कार्बोहाइड्रेट्स भी होता है जो गरीब व्यक्ति होते है वे फल का सेवन नहीं कर पाते परंतु निराश होने की आवश्यकता नहीं है यदि वो पर्याप्त मात्रा में शाक आदि का सेवन करें, तो यह कमी पूरी हो सकती है।

फल ताजे व पके ही खाने चाहिए। कच्चे तथा ज्यादा गले फल नहीं खाने चाहिए। ज्यादा देर तक कटे व खुले फलों को तो बिलकुल भी नहीं खाना चाहिए क्योंकि उनमें सक्रंमण होने की बहुत संभावना रहती है।

शाक वर्ग

करेला, बैंगन, तोरई, भिण्डी, गोभी, कच्चे टमाटर, खीरा, सेम आदि इस वर्ग में आते हैं। ये खनिज लवण तथा विटामिनों की आपूर्ति के प्रमुख स्रोत होते हैं। जिस शाक में कीड़े लगे

हों, शुष्क हो तथा पुराने सड़े हों उनका सेवन नहीं करना चाहिए। आजकल कृत्रिम तरीकों से ऋतु के विपरीत शाक का उत्पादन किया जाता है, उन्हें भी उपयोग में नहीं लाना चाहिए।

हरित वर्ग (हरे पत्तियों वाली सब्जियां)

हरे पत्ते वाले शाक में प्रमुख रूप से पालक, चौलाई, मेथी, मटर, कुल्फा, सरसों, मूली पत्र, पोदीना, धनिया आदि आते हैं इनमें खनिज लवण तथा विटामिन आदि जीवनीय तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। हमारे भोजन में प्रतिदिन 100–150 ग्राम हरी सब्जियां होनी चाहिए।

शुष्क फल (ड्राई फ्रूट्स)

काजू, पिस्ता, बादाम, अखरोट, चिरौंजी, किशमिश, नारियल, मूंगफली, चिलगोजा, मखाना आदि का उपयोग इस वर्ग में होता है। इनमें प्रोटीन बहुत होता है साथ ही इनमें वसा भी पाया जाता है। अतः यह ऊर्जा उत्पादक द्रव्य माने जाते हैं।

इक्षुवर्ग (गन्ना)

चीनी, गुड़, खांड, ग्लूकोज, आदि इस वर्ग में आते हैं। यह पदार्थ मधुर खाद्य हेतु उपयोग किए जाते हैं। ये ऊर्जा उत्पादक के उत्तम स्रोत होते हैं क्योंकि इनमें कार्बोहाइड्रेट्स अधिक होता है।

तेल वर्ग

घृत, वनस्पति घृत (हाइड्रोजिनेट्ड आयल) तथा वानस्पतिक तेल (वेजिटेबल आयल) आदि तेल वर्ग में आते हैं। जो मांसाहारी होते हैं उन्हें मांस के द्वारा चिकनाई प्राप्त हो जाती है। ये भी ऊर्जा के स्रोत होते हैं तथा इनमें घुलनशील विटामिन 'ए', 'डी', 'के', 'ई' आदि पाए जाते हैं।

मांसाहार

मांसाहार में शाकाहार की तुलना में कुछ महत्वपूर्ण तत्वों की अधिकता रहती है। शारीरिक रूप से कमजोर व्यक्तियों को डाक्टर विशेष तौर से मांसाहार लेने को कहते हैं। परंतु मांस के सेवन से पूर्व उसका पूर्ण परीक्षण करना जरूरी है– जैसे उसकी शुद्धता व किस पशु का मांस है, उसे कोई बीमारी तो नहीं है आदि बातों को ध्यान करते हुए ही मांस का सेवन करना चाहिए।

मांस में पाए जाने वाले तत्व

मांस में रेशेदार मांसपेशियां जो कनेक्टिव ऊतकों से बंधी रहती हैं। मांसपेशी के रेशों में पेशीद्रव्य (मसल्स प्लाज्मा) रहता है। इसमें खनिज लवण रहते हैं जिनमें अधिकांश पोटेशियम क्लोराइड तथा फास्फेट होता है। मांस में पाए जाने वाले प्रोटीन में मुख्य रूप से मामोसीन, मसल्य एल्ब्युमिन तथा हिमोग्लोबिन होते है। मांस के कनेक्टिव ऊतक में वसा फैली रहती है।

दुग्धाहार

दुग्ध जो अपने आप में एक पूर्ण आहार माना जाता है बच्चों से लेकर बड़ों तक के लिए बहुत जरूरी होता है। इसमें पाए जाने वाले प्रोटीन में अमीनो एसिड होते हैं अन्य कार्बोहाइड्रेट्स, वसा, लवण विटामिन, जल उपस्थित रहते है। बच्चों के लिए तो यह 'पूर्ण आहार' होता है परंतु बड़ों के लिए (सटलीमेनटरी फूड) पूरक आहार होता है। दूध में विटामिन 'ए', 'डी' और लौह की मात्रा कम होती है अतः शाकाहारियों को दूध का सेवन पूर्ण आहार के रूप में ही लेना चाहिए। रोज सुबह नाश्ते में जो भी हो, परंतु दूध का एक ग्लास होना बहुत जरूरी है। दूध का सेवन करने से पूर्व उसकी शुद्धता, तथा वह स्वस्थ पशु द्वारा, सफाई से, साफ बर्तन में निकाला गया है कि नहीं इस बात का भी जरूर ध्यान रखना चाहिए।

दूध में पाए जाने वाले तत्व

गाय, भैंस या अन्य सभी के दूध में समान तत्वों का ही संगठन होता है। परंतु कुछ अंतर अवश्य होता है जैसे गाय के दूध में प्रोटीन अधिक होता है, स्त्री के दूध में शर्करा (लेक्टोस) की मात्रा अधिक होती है। भैंस के दूध में वसा अधिक होता है। दही में वो सब तत्व पाए जाते हैं जो दूध में पाए जाते हैं। टोंड दूध या वसारहित दूध में घृत नहीं होता है परंतु बाकी सभी तत्व पाए जाते हैं।

हमारे देश में बहुत से गरीब लोग हैं जिन्हें दूध नहीं प्राप्त हो पाता है अतः वे सोयाबीन या मूंगफली से कृत्रिम रूप से तैयार दुग्ध का सेवन कर सकते हैं। 100 ग्राम सोयाबीन के दूध में 4.2 प्रोटीन, 2.5 वसा, 3.2 कार्बोहाइड्रेट्स तथा 51 कैलोरी ऊष्मा प्राप्त होती है।

शरीर स्वस्थ तथा दुबला, जो देखने में आकर्षक हो ऐसा आजकल सभी की इच्छा रहती है। परंतु भागदौड़ की इस दुनिया में सभी कुछ अस्तवयस्त हो गया है चाहे वो पारिवारिक संतुलन हो या आहार का संतुलन परंतु यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने भोजन में छः तत्वों से संगठित भोजन को अपनी दिनचर्या में सम्मिलित करे तो अपने दैनिक काम–काज

के साथ–साथ वह अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखते हुए ताजगी और स्फूर्ति कायम रख सकता है।

8 बजे : प्रत्येक व्यक्ति को चाहिए कि वह अपना नाश्ता 8 बजे तक कर ले। इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि नाश्ते में प्रोटीनयुक्त चीजों का होना बहुत आवश्यक है। एक गिलास दूध या एक उबला अंडा या दलिया या रोटी–सब्जी भी खाई जा सकती है। नाश्ते में चाहे जो कुछ हो एक गिलास दूध का होना बहुत जरूरी है।

11 बजे : करीब ग्यारह बजे फल या फल का रस या सलाद खाएं।

1–2 बजे : दिन के खाने में 2–3 रोटी, एक कटोरी दाल, एक कटोरी हरी सब्जी, सलाद, यदि चाहे तो (एक कटोरी चावल), एक कटोरी दही खानी चाहिए।

4 बजे : शाम के चार से पांच बजे अंकुरित दालें, ढोकला, चने मुरमुरे, इडली आदि हल्के आहार का सेवन कर सकते हैं। पकौड़ी जैसी तली चीजों का जितना परहेज करें स्वास्थ्य के लिए उतना ही उत्तम रहेगा।

8–9 बजे : रात का खाना, दिन के खाने जैसा ही होना चाहिए। या अपने स्वास्थ्य के अनुसार परंतु इस बात पर जरूर ध्यान देना चाहिए कि, सोने से 2–3 घंटे पूर्व भोजन कर लिया जाए नहीं तो इससे पाचन संबंधित विकार, जैसे गैस आदि बनने की संभावना रहती है।

ये तो हो गया सामान्य आहार तालिका परंतु, जो गर्भवती महिलाएं है, बढ़ते बच्चे, बूढ़े या युवा वर्ग जिनका शारीरिक श्रम अधिक या कम होता है वे अपने अनुसार भोजन की पौष्टिकता को कम या ज्यादा कर सकते हैं।

गर्भवती महिलाएं

जिन्हें प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन जैसे तत्वों की अधिक आवश्यकता होती हैं। इसके लिए उन्हें दालों, कार्नफ्लेक्स, दूध, दही, मांस, मछली अंडा, सब्जियों, फलों का पर्याप्त मात्रा में सेवन करना चाहिए। बहुत–सी महिलाओं को खाने की इच्छा नहीं होती है अतः वह थोड़ा–थोड़ा भोजन कम समय के अंतराल पर ले सकती हैं। चने को भूनकर यदि गुड़ के साथ खाया जाये तो, चने के द्वारा प्रोटीन मिलेगा और गुड़ से आयरन और कार्बोहाइड्रेट्स। मूंगफली भी अच्छी रहती है। चने को उबालकर उसमें, प्याज काटकर नींबू, नमक डालकर खाया जाये तो वह पौष्टिक तो होगा ही, स्वादिष्ट भी होगा, साथ ही तेल, घी से रहित भी। इस समय के दौरान मिर्च–मसाले, तैलीय, गरिष्ठ चीजों से बचना चाहिए क्योंकि उनका पाचन तंत्र कमजोर रहता है जिससे कब्ज़ होना स्वाभाविक है उन्हें आराम भी ठीक से करना चाहिए। दिन में 2 घंटे विश्राम करना आवश्यक है। विश्राम के साथ–साथ सुबह–शाम टहलना भी बहुत जरूरी है। परंतु यदि कोई विशेष परेशानी हो तो अपने डाक्टर से सलाह जरूर लेनी चाहिए। अब आती है बच्चों की बारी, जैसे ही कोई नवजात बच्चा घर आता है चारों तरफ खुशी की लहर दौड़ जाती है। बच्चे को सिर्फ मां का ही दूध देना चाहिए उसे ऊपर का कुछ भी नहीं देना चाहिए। मां का दूध ही उसके लिए पर्याप्त रहता है साथ ही इस दूध में 'कोलेस्ट्रम' पाया जाता है जो बच्चे को विभिन्न रोगों से लड़ने में मदद करता है। छः मास तक बच्चे को मां का ही दूध देना चाहिए इसके बाद बढ़ रहे बच्चे के लिए अन्य तत्वों की भी आवश्यकता होती है क्योंकि अब उसके लिये इतना आहार पर्याप्त नहीं होता है। अतः उसे केला मसलकर दिया जा सकता है यदि इसमें इलायची का चूर्ण मिला दिया जाय तो उसे हज़म करने में सहायता मिलेगी और कब्ज भी नहीं रहेगा।

प्रारंभ में गाय के दूध में पानी मिलाकर दिया जा सकता है। मां को चाहिए कि वह अपने बच्चे को डिब्बाबंद आहार की अपेक्षा, प्राकृतिक व ताजा भोजन कराये। गाजर, आलू चावल, दाल, दलिया, फल, सब्जियों को उबाल कर मसलकर बच्चों को दिया जाये तो वह उत्तम रहेगा। बच्चों को भोजन देते समय यह भी ध्यान देना चाहिए कि भोजन में अंतराल कितना है क्योंकि हर उम्र के बच्चों के लिए यह अंतराल अलग–अलग होता है। बढ़ते बच्चों के लिए प्रोटीन तथा कैल्शियमयुक्त भोजन बहुत आवश्यक है। प्रोटीन उनकी शारीरिक वृद्धि के लिए तथा कैल्शियम हड्डियों की वृद्धि एवं मजबूती के लिए आवश्यक है। इसलिए दालें, दूध तथा दूध से बनी चीजें बच्चों को पर्याप्त मात्रा में मिलनी चाहिए।

सामान्य पुरुष जो शारीरिक श्रम कम करते हैं उन्हें लगभग चौबीस से पच्चीस सौ ग्राम कैलोरी प्रतिदिन लेनी चाहिए। यदि वह श्रम करते हैं तो प्रोटीन की मात्रा ज्यादा लें। दूध और दूध से बनी चीजें, मांस, मछली, अंडा, दालें आदि का पर्याप्त मात्रा में सेवन करें।

युवा वर्ग के बाद आती है वृद्धावस्था, इस अवस्था तक आते–आते अधिकतर लोग, कई तरह की बीमारियों से ग्रस्त हो जाते हैं, उनका पाचन तंत्र कमजोर हो जाता है कोई मधुमेह रोग से ग्रस्त होता है तो कोई उच्च रक्तदाब से, तो कोई खून व कैल्शियम की कमी के कारण एनीमिया का शिकार हो जाता है। जोड़ों में दर्द रहना तो आम परेशानी है। यदि शुरू से ही आहार–विहार यानी अपने खान–पान व शारीरिक श्रम को ध्यान में रख कर, मानसिक चिन्ताओं से बचकर जीवन का निर्वाह करने की कोशिश की जाये, तो इस अवस्था की तमाम परेशानियों से बचा जा सकता है।

परंतु इन रोगों से ग्रस्त हैं तो भी घबराने की आवश्यकता नहीं है। अपने आहार को अपने स्वास्थ्य के अनुसार संयमित किया जा सकता है। जैसे मधुमेह के मरीज नीम की 4–5 पत्तियों को, नरम डंठल के साथ, 4–5 काली मिर्च के साथ पीसकर, प्रातःकाल लें और सुबह–शाम शुद्ध वातावरण में टहलें तो यह उनके लिए बहुत लाभकारी होगा। उच्च दाब से पीड़ित व्यक्ति नमक, घी, तेल ज्यादा चिकनाई की चीजों से परहेज करें, साथ ही मानसिक क्लेश से बचें। श्वास रोग से पीड़ित व्यक्तियों को भाप, शुद्ध पानी का लेना चाहिए और ऐसे स्थान पर जहां ज्यादा हरे पेड़ वगैरह हों, शुद्ध वातावरण जैसे पार्क वगैरह में टहलना चाहिए जिससे उन्हें आक्सीजन मिल सके। जोड़ों के दर्द से पीड़ित लोग अपने आहार पर विशेष ध्यान दें, वायु उत्पन्न करने वाली चीजों का परहेज करें। यदि घुटने में दर्द है तो उसे मोड़ें न, नमक पानी से सेक करें और यदि हो सके तो 'नी कैप' पहनें, जिसे सोते समय उतार दें।

अतः यदि समय आयु, स्वास्थ्य वातावरण, आदि को ध्यान में रखकर, व्यक्ति आहार, विहार का सेवन करे तो उसे स्वस्थ रहने से कोई रोक नहीं सकता हैं। ❑

(लेखिका आयुर्वेदाचार्य हैं)

आयोडीन की कमी : कारण, लक्षण और नियंत्रण

जिल्ले रहमान

किसी भी देश की चहुंमुखी प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि उसके निवासी शिक्षित और स्वस्थ हों। खेद की बात है कि इन दोनों ही क्षेत्रों में हमारे देश में अपेक्षित जागरूकता उपाय अभी तक नहीं हो पाए हैं। हालांकि इस बारे में विभिन्न स्तरों पर नियमित प्रयास अवश्य चल रहे हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से देखें तो कैल्शियम, आयरन, विटामिन की तरह आयोडीन भी एक जरूरी पोषक तत्व है, जो शरीर में थायराक्सीन हार्मोन के निर्माण में मदद करता है। दरअसल, थायराक्सीन मनुष्य की सामान्य बौद्धिक क्षमता और इसके विकास को नियंत्रित करता है।

एक अनुमान के अनुसार हमारे देश में 22 करोड़ से भी ज्यादा लोग आयोडीन की कमी से पैदा होने वाले विकारों से ग्रस्त हैं। इनमें अधिकतर घेंघा (गॉयटर) से पीड़ित हैं। इसके अलावा आयोडीन की अल्पता से गर्भपात, मृत बच्चे का जन्म, मानसिक मंदता, मूक बधिरता, और न्यूरोमोटर जैसे विकार की भी आशंका रहती है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि अभी तक आम लोगों को इस बारे में जागरूक करने का अभियान पूरी गति नहीं पकड़ पाया है। ज्यादातर लोगों का मानना है कि आयोडीन की कमी कुछ खास इलाकों में ज्यादा है, लेकिन ऐसा बिल्कुल नहीं है। हिमालय की तराई में बसे प्रदेशों जम्मू-कश्मीर से लेकर उत्तर-पूर्व तक के करीब 2,500 वर्ग किलोमीटर का पूरा इलाका इसकी कमी का शिकार है। केंद्रीय और राज्य स्वास्थ्य निदेशालयों, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद और चिकित्सा क्षेत्र से जुड़ी संस्थाओं द्वारा किए गए सर्वेक्षणों से पता चलता है कि मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, गोवा, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और दिल्ली भी इससे अछूते नहीं हैं। यहां भी घेंघा (गॉयटर) नामक बीमारी के शिकार लोग पाए गए हैं। हां, दक्षिण भारत के कर्नाटक में इसकी रोकथाम के लिए कुछ कारगर कदम अवश्य उठाए गए हैं। यह एक ऐसा राज्य है जहां 90 प्रतिशत लोग आयोडीन नमक का उपयोग करते हैं और बिना आयोडीन वाले नमक की बिक्री पर पूरी तरह रोक लगा दी गई है और पकड़े जाने पर उस पर कानूनी कार्रवाई भी की जाती है।

आयोडीन विकार के लक्षण

इसमें गलग्रंथि (थायराइड ग्लैंड) बढ़ जाती है, जिससे गले में मामूली-सी सूजन से लेकर बड़ी गिल्टी तक हो जाती है। शुरू-शुरू में किसी के लिए भी जान पाना मुश्किल होता है कि आखिर यह है क्या। घेंघा होने पर शरीर में चुस्ती-फुर्ती नहीं रहती। सामान्य व्यक्ति के बनिस्बत उसमें काम करने की क्षमता कम होती जाती है।

गर्भवती मां और नाबालिग बच्चों में आयोडीन की कमी का सबसे बुरा असर पड़ता है। मां के शरीर में आयोडीन की अधिक कमी होने से बच्चे का शारीरिक और मानसिक विकास बहुत धीमी गति से होता है। वे सुस्त होते हैं। इसके अलावा गर्भावस्था में आयोडीन की कमी से गर्भपात तक हो सकता है, बच्चा मर भी सकता है। ऐसा नहीं कि इसका प्रभाव सिर्फ बच्चों व गर्भवती महिलाओं पर ही पड़ता है बल्कि वयस्कों में भी इसका असर समान रूप से देखा गया है। बहरहाल बच्चों व वयस्कों में आयोडीन की अल्पता से मानसिक मंदता, जल्दी थकान, गूंगापन, बहरापन, अंधता, बौनापन, कार्यक्षमता में कमी का होना आम है। इनमें से अधिकतर दोष ऐसे हैं जिनका इलाज नामुमकिन है।

सावधानियां

ऐसे में क्यों न शुरुआत में ही एहतियात बरत कर इसे रोका जाए। नमक में एक निश्चित मात्रा आयोडीन की मिलाई जा सकती है। नमक में आयोडीन यौगिक मिलाना आसान है इसमें कोई रासायनिक प्रतिक्रिया नहीं होती है। नमक में आयोडीन मिलाने से उसके रंग, स्वाद या गंध में भी कोई फर्क नहीं पड़ता है।

नियंत्रण कार्यक्रम

आयोडीन की कमी समस्या की व्यापकता को महसूस करते हुए भारत सरकार ने पहली पहल 1962 में शत-प्रतिशत केंद्रीय सहायता प्राप्त राष्ट्रीय घेंघा नियंत्रण कार्यक्रम शुरू किया। अगस्त 1992 में राष्ट्रीय घेंघा नियंत्रण कार्यक्रम के स्थान पर राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम (एनआईडीडीसीपी) अपनाया गया जिसके निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए।

- आयोडीन अल्पता विकारों को रोकने के लिए सर्वेक्षण करना
- सामान्य नमक के स्थान पर आयोडीनयुक्त नमक की आपूर्ति
- स्वास्थ्य शिक्षा और प्रचार
- हर पांच वर्ष के बाद नियंत्रण उपायों को आंकने के लिए सर्वेक्षण करना
- आयोडीनकृत नमक की गुणवत्ता की मानीटरिंग करना और आयोडीन उत्सर्जन पैटर्न को आंकना।

राज्य सरकारों का दायित्व

भारत सरकार राज्य सरकारों को लगातार इस बात की सलाह देती रही है कि वे अपने अधिकार क्षेत्र में आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कक्ष (आईडीडी) की स्थापना करें और जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी साधारण नमक उत्पादक पर रोक लगाने की अधिसूचना जारी करें। भारत में बड़े स्तर पर नमक उत्पादक क्षेत्र हैं – गुजरात,

तमिलनाडु, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल। इसमें आयोडीनयुक्त नमक के उत्पादन का 94 प्रतिशत केवल निजी क्षेत्रों के हाथ में है। और खुशी की बात है कि निजी क्षेत्र के नमक उत्पादक भी आयोडीनयुक्त नमक की महत्ता को समझते हुए अपने उपभोक्ताओं को उपयुक्त आयोडीनयुक्त नमक देने में एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा करने लगे हैं। अधिकतर राज्यों में आयोडीन रहित नमक बेचने पर प्रतिबंध लगाना होगा। आयोडीन नमक सीलबंद हो ताकि उसकी गुणवत्ता अप्रभावित रहे।

सरकारी योजनाएं

आयोडीन अल्पता विकार की रोकथाम के लिए नौवीं पंचवर्षीय योजना में 90 आयोडीन अल्पता विकार मानीटरिंग प्रयोगशाला स्थापित करके आयोडीन विकार की मानीटरिंग को सुदृढ़ किए जाने का प्रस्ताव रखा गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना में भी आयोडीन अल्पता विकार की समस्या को नियंत्रित करने की आवश्यकता पर बल दिया गया।

यद्यपि भारत में समस्या का अपेक्षित पूर्ण निदान अभी नहीं हो पाया है। इस संबंध में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आम जनता को इसके बारे में भरपूर प्रचार करके और अधिक जागरूक किया जाए। गैरसरकारी संस्थाएं व पंचायती राज संस्थाएं इस क्षेत्र में अहम भूमिका निभा सकती हैं। संतोष का विषय है कि इस संबंध में राष्ट्रीय आयोडीन अल्पता विकार नियंत्रण कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न संपर्क माध्यमों से आम जनता तक आयोडीनयुक्त नमक उपयोग करने का प्रचार पहुंच भी रहा है। लेकिन दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों में अभी भी इस प्रचार अभियान का पहुंचना शेष है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

(पृष्ठ 40 का शेष) हमारी संस्कृति की...

दार्शनिकता एवं विद्वता की ओर इशारा करती थीं।

पश्चिमी वेशभूषा से प्रभावित नई पीढ़ी के बीच पगड़ियां आज अपना महत्व खो रही हैं। लेकिन देश के सांस्कृतिक रहन–सहन और गांवों में पगड़ियों की पैठ आज भी बनी हुई है। मसलन राजस्थान के जैसलमेर के लंगा–मांग–रियार जाति के लोकगायक रंगीन छायल डिब्बीदार भांतवाली पगड़ी बांधते हैं तो गुजरात के कच्छ जिले की खाड़ी जाति के लोग बिल्कुल अलग ढंग की पगड़ी लपेटते हैं। पंजाब में पगड़ी को सिखों की आन और शान कहते हैं। कुछ सिख विद्वान इसे गुरुओं से मिली नेमत मानते हैं। यहां पगड़ी बांधने की कई शैलियां प्रचलित हैं। इनमें पटियाला शाही, नामधारी, साधी, दमदमी टकसाल, भांगड़ा और भगतसिंह स्टाइल प्रमुख हैं। पंजाब के लोकजीवन में भी कई तरह की पगड़ियां देखने को मिलती हैं जिनका बांधने का अंदाज अनोखा और मौलिक है। पगड़ी संस्कृति को अगर नजदीक से देखना है तो दिल्ली हाट–शिल्प संग्रहालय के दस्तकारों को देखिये– अलग–अलग रंग–ढंग और सुंदर नमूने लिए हुए पगड़ियां। यहीं पर आदिवासी मोरपंख, नीम की पत्ती, पलाश के फूल और मूंगे–कौड़ियों से सजी पगड़ी भी दिख जाएंगी।

इन जगहों के अलावा निजी संग्रहालय में अलग–अलग कालखंड की अनूठी पगड़ियां देखी जा सकती हैं। ऐसा ही एक संग्रहालय है अवंतीलाल चावला का। चावला महाराजा सायाजी विश्वविद्यालय में अध्यापक हैं और पिछले कई सालों से पगड़ियां संग्रहित कर रहे हैं। सहारा ग्रुप की 'सुभाष चंद्र बोस' फिल्म में इनके कलात्मक योगदान की भी ख़बर है। बहरहाल, शहरी सभ्यता से पगड़ियों के लुप्त होने से वे अच्छे–खासे चिंतित हैं और पगड़ी परम्परा को जिलाए रखने की हर मुमकिन कोशिश कर रहे हैं। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/ चाहती हूं/ चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये, दो वर्ष के लिए 135 रुपये, तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

.....

पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग,
पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066

*कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को नई दिल्ली में देय हो।*

स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री का भाषण : मुख्य बातें

- स्वतंत्रता दिवस एक ऐसा दिन है, जब हम अपने स्वाधीनता संग्राम के नेताओं का स्मरण और सम्मान करते हैं।
- इस दिन हम अपने जवानों तथा सुरक्षा बलों को उनकी बहादुरी और बलिदान के लिए धन्यवाद देते हैं।
- भारत कैसा हो? एक ऐसा भारत, जहां इंसाफ और इंसानियत फले और फूले। एक ऐसा भारत जहां सभी नागरिक समान हों। एक ऐसा भारत, जो खुशहाल हो। एक ऐसा भारत, जहां अमन–चैन हो। एक ऐसा भारत, जहां हर नागरिक पढ़ा–लिखा हो तथा सेहतमंद हो। एक ऐसा भारत, जिसमें हर व्यक्ति को रोजगार मिले। एक ऐसा भारत, जिसमें आम आदमी का भविष्य उज्ज्वल हो।
- विविधता में एकता ही हमारी ताकत है। धर्मनिरपेक्षता और सामाजिक न्याय हमारे राष्ट्र के प्रतीक हैं। कानून की नज़र में सब की बराबरी हमारी पहचान है।
- जो हम हैं, वही हमारा देश है। जैसा हम अपने आप को बनाएंगे वैसा ही हमारा देश भी बनेगा।
- **नई पहल** के तहत ग्रामीण इलाकों में सिंचाई, कर्ज, बिजली, प्राथमिक शिक्षा, चिकित्सा सेवा, सड़कों का निर्माण, आदि बुनियादी ढांचे के विकास में निवेश करना आवश्यक है।
- सभी राजनैतिक दलों और सार्वजनिक जीवन में सभी लोगों के लिए एक नैतिक संहिता बनानी होगी। सरकारी कामकाज के लिए बेहतरीन कार्य–प्रणाली लागू करनी होगी।
- National Common Minimum Programme में से सात ऐसे सेक्टर चुने हैं जिन पर खास तौर से ध्यान दिया जाएगा। ये हैं – कृषि, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, शहरी इलाकों का सुधार तथा infrastructure। ये हमारे सात सूत्र हैं।
- सभी राजनीतिक नेताओं से जल संसाधन के प्रबंध के चुनौती के प्रति एक राष्ट्रीय तथा संपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने का आग्रह।
- जल प्रबंध और जल संरक्षण में लोगों से भागीदार बनने की अपील।
- सिंचाई में सार्वजनिक निवेश बढ़ाने और लघु सिंचाई में आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के प्रति वचनबद्धता।
- ग्रामीण संयोजकता बढ़ाने में सार्वजनिक निजी भागीदारी।
- गरीबी दूर करने और अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों को अधिकार संपन्न बनाने पर विशेष ध्यान।
- महिलाओं को अधिकार संपन्न बनाने की दिशा में बालिकाओं की शिक्षा एक महत्वपूर्ण कदम।
- बच्चों के कल्याण, शिक्षा, पोषण और स्वास्थ्य के प्रति वचनबद्धता।
- छोटे और मझौले उद्यमों, पर्यटन और बुनियादी संरचना के क्षेत्र में रोजगार पर जोर।
- रोजगार पैदा करने की रणनीति में **काम के बदले अनाज कार्यक्रम** एक महत्वपूर्ण घटक।
- तेज आर्थिक विकास के साथ–साथ लाभों के बेहतर वितरण पर जोर।
- निजी उद्यमों और व्यक्तिगत प्रयासों को जारी रखने की संभावनाओं को बढ़ाना, आर्थिक सुधारों का लक्ष्य।
- सूचना प्रौद्योगिकी ढांचे तक व्यापक पहुंच और उसमें निवेश बढ़ाने के प्रति वचनबद्धता।
- व्यापक राष्ट्रीय आंदोलन के जरिए वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा।
- उच्च शिक्षा में पेशेवर उत्कृष्टता और बौद्धिक संपूर्णता के साथ–साथ सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्धता पर जोर।
- केंद्र, राज्य और स्थानीय, सभी स्तरों पर सरकार में सुधार।
- पंचायतों और शहरी स्थानीय निकायों के निम्नतम स्तर को मजबूत करने के उपाय किए जाएंगे।
- कम विकसित क्षेत्रों में नए निवेश को बढ़ावा।
- उत्तर–पूर्वी राज्यों और जम्मू–कश्मीर में प्रशासन, विकास और बुनियादी संरचानाओं पर विशेष ध्यान।
- हम पूरे संकल्प के साथ आतंकवाद से लड़ेंगे। इस बारे में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए। वैसे, हिंसा का रास्ता छोड़ने वाले किसी भी गुट के साथ हम बातचीत करने के लिए तैयार।
- सशस्त्र सेनाओं और सुरक्षा बलों तथा उनके कल्याण का आश्वासन और आधुनिकीकरण के लिए भरपूर मदद।
- पड़ोस में शांति और समृद्धि का आश्वासन तथा सभी पड़ोसी देशों के साथ घनिष्ट राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक संबंध।
- सभी विवादों को निपटाने के लिए पाकिस्तान के साथ उद्देश्यपूर्ण परस्पर बातचीत। पाकिस्तान के साथ वार्ता प्रक्रिया को दृढ़ निश्चय और गंभीरता के साथ आगे बढ़ाने का इरादा।
- चीन के साथ संबंधों को मजबूत करने और बढ़ाने का वायदा। राजनीतिक दूरदर्शिता और व्यावहारिक नजरिए से सीमा के सवाल को हल करने के लिए वार्ता प्रक्रिया को जारी रखा जाएगा।

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. 12057/2003-05
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.) -55/2003-5

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL 12057/2003-05
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2003-05
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रो. उमाकांत मिश्र, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला औद्योगिक क्षेत्र फेज़-II, नई दिल्ली-110020. संपादक : स्नेह राय